प्रबोधचन्द्रोदय नाटक.

(भाषा)

॥ श्रीः ॥

प्रबोधचन्द्रोदयनाटक ।

कविगुलाबसिंहकृत.

जिसको ।

पं० गुरुप्रसादउदासीनने गुरुमुखी अक्षरोंसे
देवनागरीमें टिप्पणीसहित उद्धृत किया ।

वह

मुमुक्षजनोंके हितार्थ,

खेमराज श्रीकृष्णदासने

बंबई

निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम्) यन्त्रालयमें

छापकर प्रसिद्ध किया ।

संवत् १९८०, शक १८४५,

यह पुस्तक खेमराज श्रीकृष्णदासने बम्बई खेतवाडी ७ वीं गली खम्बाटा लैन निज "**श्रीवेंकटेश्वर**" स्टीम् प्रेसमें अपने लिये छापकर यहीं प्रकाशित किया ।

विज्ञापन।

विदित हो कि शान्तरसप्रधान गौणतया शृंगारादि अखिलरसोंसे संयुक्त अध्यात्मविद्या विरोधि नानापाखण्डमतोंके सिद्धांतोको उच्छिन्न करताहुआ संस्कृतमें प्रबोधचन्द्रोदय नामा नाटक इस धरामण्डलमें सर्वोपरि वर्तमानहै सो संस्कृतमें अतिकठिन होनेसे भाषाके अभिज्ञजनोंको दुर्विज्ञेय जानकर कवि गुलाबसिंहजीने भाषामें दोहा सवैया कवित्त सोरठों करके अनुवाद कियाहै-इस नाटकमें प्रायः वेदांतका सर्वस्व सन्निविष्टहै और इसमें ऐसी सुगमरीतिसे ब्रह्मात्म्यैक्यत्वका प्रतिपादन कियाहै कि, मन्दवैराग्यवाले पुरुषभी इस ग्रन्थके विचारसे अध्यात्मतत्त्वका लाभकर सकतेहैं-यद्यपि उक्त कविजीकी भाषा बहुत सुगम और साधारण पुरुषोंकोभी समुझने योग्यहै-तथापि-कहीं कहीं स्थलविषे विषयको अतिकठिन होनेसे गुरुओंके विना स्वयं समुझना अशक्यहै ऐसा जानकर और अधिकारीजनोंको विचारपूर्वक इसग्रन्थके अवलोकनसे बोधोत्पत्तिके अर्थ श्रीसाधुवेलाके निवासी परमदयालु पण्डित गुरुप्रसादजीने इसग्रन्थको शुद्ध करके तथा इसके नीचे बडे परिश्रमसे श्रुति स्मृति पुराण वचनोंको उद्धृत करके तथा तिनका अर्थ अतिसुगम रीतिसे दर्शायकर संस्कृत प्रबोधचन्द्रोदयनाटकके अनुसार संक्षिप्ताक्षरी टिप्पणीरूपसे प्रगट करके तथा पण्डितजीने इस टिप्पणीसहित ग्रन्थको तयार करके निज श्रीगुरुश्री १०८मान् परमहंसपरमानन्दजीके चरणपङ्कजोंमें समर्पण किया है। अब आशाहै कि इस ग्रन्थप्रतिपाद्यविषयके मनन करनेसे अधिकारी जन आवरण शक्तिविशिष्ट अज्ञाननिवृत्तिपूर्वक परमानन्दकीप्राप्तिरूप जीवन्मुक्तिके सुखका अनुभव करतेहुए पण्डितजीके परिश्रमको सफल करेंगे इति शम्-

भक्तजनोंका कृपाकांक्षी-

खेमराज श्रीकृष्णदास.

नाटक पात्र ।

सूत्रधार	नाटकआचार्य.
नटी	तिसकीपत्नी.
बिवेक	प्रधाननायक.
मति	तिसकीपत्नी.
वस्तुविचार	विवेककिंकर.
सन्तोष	तिसकासहचर.
पुरुष	उपनिषद्स्वामी.
प्रबोधउदय	पुरुषपुत्र.
श्रद्धा	सात्विकी, राजसी, तामसी३प्र.
शांति	विवेकभगिनी.
करुणा	शांतिकीसखी.
मैत्री	श्रद्धासखी.
विष्णुभक्ति	उपनिषत्सखी.
उपनिषद्	वेदांतशास्त्र.
सरस्वती	विष्णुभक्तिकीसखी.
क्षमा	विवेकदासी.
वैराग्य, निदिध्यासन, संकल्प	मनके पुत्र.
परिपार्श्वक. पुरुष, सारथी, प्रतिहारी	ये दूसरे हैं.
महामोह	बिवेकशत्रु.
चार्वाक	मोहकामित्र.
काम, क्रोध, लोभ, दम्भ, अहंकार.	ये महामोहके वजीरहैं
मन	संकल्पात्मक.
दिगंबर, भिक्षु, क्षपणक, कपालिक	येबुद्धजैनादि मतके प्रवर्तक हैं
मिथ्यादृष्टि	मोहपत्नी.
विभ्रमावती	तिसकीसखी
रति	कामपत्नी.
हिंसा	क्रोधपत्नी.
तृष्णा	लोभपत्नी.
बटु, शिष्य, पुरुष, दौवारिक.	येदूसरे हैं



श्रीगणेशाय नमः ।

ॐ तत्सद्ब्रह्मणे नमः ।

अथ श्रीमत्कवि गुलाबसिंह कृत-

प्रबोधचन्द्रोदय नाटक भाषा प्रारम्भ ।

दोहा ।

गौरीपुत्र गणेशपद, वन्दों वारंवार ॥
कार्य कीजिय सिद्ध मम, देहु सुबुद्धि उदार ॥ १ ॥
जाके नाम प्रतापते, जलपर शैल तराहिं ॥
वह रघुनायक दासके, सदा बसै मनमाहिं ॥ २ ॥
गुरुनानक गोविन्द गुरु, जासम और न कोइ ॥
अभिवन्दन पदकमल तिन, जोर सदा कर दोइ ॥ ३ ॥
भारत भूमिपुनीत पद, तपोज्ञान अवतार ॥
मानसिंह गुरुको नमो, तारण करुणासार ॥ ४ ॥

नराज छन्द ।

प्रबोधचन्द्र नाटकं, सुबोध ग्रन्थ मैं करों ॥
अलंब साधु संगको, विचार चित्तमें धरों ॥
सुनैं पढैं सु जे जना, निवार मोह बन्धना ॥
लहैं अपार मोक्षको, टुटै समस्त फन्दना ॥ ५ ॥

सवैया ।

भूपन बोध सुबोध नहीं अति कौतुक माहिं रहैं लपटाए ॥
बोध बिना जगमोक्ष कहां इम संतसभै मुखवेदं अलाए ॥

---

१ ग्रन्थकी निर्विघ्न समाप्ति रूप । २ आदि अन्तके ग्रहणसे दशों बादशाहोंका ग्रहण करना । ३ ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः । ज्ञानादेवतुकैवल्यम् । इत्यादिवेद ॥

अंतसमै यम दीनकरे तिन हेर महा करुणारस आए ॥
बोध उपावन हेत मनो नरनाहनके इह ग्रन्थ बनाए ॥६॥
भानुमरीचि सुनीर सम पुनि जा अज्ञान जगत्त बनायो ॥
वायु अकाश सुपावक नीर मही पुनि लोक सुतीन उपायो॥
जाहिं पिखेरजुसांपजिमें जगफेरसभोतिनमाहिं बिलायो ॥
उज्जलआतमबोध[१] महाहमआनँदसों उरमाहिंधियायो॥७॥
प्रैत्यकूज्योति[३] सनातन जोजग व्यापरही सभमाहिं सुहाई ॥
रिदशांतविषेअतिभासतहै कृतसंयमकोजिह आनन्दताई ॥
विधुचूडनिरोधसुवायुभले ब्रह्मरन्ध्रहते अतिऊँचचलाई ॥
ह्गतीसरब्याजसुभालविषेशिवसंयमवन्तसुआपदिखाई॥८॥

दोहा ।

कीरतिवरमा नाम जिह,भूपति बडो रसाल ॥
ताहिसभामें विमलमति, आहि प्रधानगुपाल ॥ ९॥
वर्ष एक नाटक तहां, भयो सुसभामंझार ॥
जाको हेरसुज्ञानलहि, भये भूप भवपार ॥ १० ॥
याकों सुने जु कानमें, नीके चित्त लगाइ ॥
आसुरसंपति दूर तज, वेगज्ञान वहु पाइ ॥ ११॥

सूत्रधार उवाच स्वपत्नीं प्रति ॥

सवैया ।

बहुबातनको कछु कामनहीं अब आयसुमोहिंगुपालदई ॥
सभभूपति जांमुकुटामणिके पदपंकज आरती आनिकई ॥

१ अविद्या तत्कार्यमलरहितस्वप्रकाशरूप । २ सेवते हैं अर्थात् उपासते हैं ।
३ अनृत जड दुःखरूपअहंकारादिकोंसेप्रतिकूलहोयकर अर्थात् सत्यज्ञानान्दादिरूपकर जोप्रकाशे सो कहियेप्रत्यकूसोई होवैज्योति कहिये प्रकाशरूपसो कहिये प्रत्यकूज्योति ॥

प्रबलारिसमूहमहीपनके उरपाटनको नरसिंहमई ॥
बलभूपतिसिंधुधसी धरनी इन फेर वराहउधारलई ॥ १२ ॥
दिगनारविलासनिकाननमें जिहकीरतिके श्रुतिटंक बनाए ॥
सभदिग्गजंकानसुतालबडे विचताहिसफालनपौनउपाए ॥
तिहंसंगमिले अतिनाचत है भवताहिप्रताप सुज्वालबढाए ॥
तिन आप गुपाल सुएहकह्यो वहुनाटक भूपति देहु दिखाए १३

दोहा।

सहज सुहृदस्वभाव यह, कीरतिवरमा भूप ॥
ताहित उदम थोकियो, दिग्जँयपरमअनूप ॥ १४ ॥
ताव्यापारअंत्रतभयो, परमानन्दहमार ॥
विविधविषयरसपरसकर, भये मनोजविकार ॥ १५ ॥
ताव्यापारदूषितमनो, वासर दये विताय ॥
कृतकृत्यभये सुआजहम, भूपतिराजदिवाय ॥ १६ ॥

सवैया।

प्रसिद्ध अमातनभूपतिके सुँविपक्षवलीनृप मारगिराए ॥
रक्षपालकरी सगली धरणी पुनि याहिकि सीसह छत्र फिराये॥
सुपयोनिधिमेखलयाहधराशिर भूपनके इनराज ठराए ॥
रस शांत प्रयोग निवेदनकै जग आपविनोदकरेइमभाए॥ १७॥

---

१ दिग्गजोंके कानोंरूपीतालोंकर उत्पन्नभयाजो बहुत पवन। २ तिसपवनके साथ वृद्धिको प्राप्तहोयकर संसारमें प्रवृत्तहोरहाहै प्रतापरूपअग्निजिसका। ३गोपाल। ४ शत्रु। ५ शांतरसहै प्रधानजिसमें ऐसाजोनाट्यानुकरण तिसके निवेदन कहिये जनावनंकरकै ॥

कवित्त ।

प्रबोधचन्द्रनाटकं सुआहिनटतोहिढिग,
कृष्णमिश्रआपजोईपूरबबनायोहै ॥
कीरतिवरमके समीप सोई नाटकरो,
हेरनको भूपतिको मन उमगायोहै ॥
सुनो सूत्रधार तुमप्रगटविचारकरो,
सभाहूसमेतरिदेकौतकसुहायोहै ॥
सुनिकै गुपालवाक सूत्रधारचारवाक,
नाटककेहेत निजनारिको बुलायोहै ॥ १८ ॥
नेपथ्यकीओर तिनहेरके पुकारकह्यो,
आर्येसुआउ इततवी नटी आई है ॥
आर्य्य सुकौन काज मोहिंको बुलायो आज,
कीजिये सुकाज अब बेर क्यों लगाईहै ॥
सूत्रधार ताहिको उचार पुनिएहु कह्यो,
आर्यें अजान नाहिं जाहितबुलाईहै ॥ १९ ॥
नाटकप्रबोधचन्द्र चन्द्रमासमान जग,
दीजिये दिखाइ यों गुपालमन आयोहै ॥
भूपति विपुलबल सोई तू अरण्यजान,
पावक प्रतापवनसंगते बढायोहै ॥
ताहिकी सुज्वाल तीन भौनमें बिसाल बढी,
कीरतिको पुंज लोकतीनहूमेंगायोहै ॥

१ नाटककाआचार्य । २ नेपथ्यनामकनातकाहै ॥

लीनेचन्द्रहास प्रतिकूलनृपनासकर,
जीतिके गुपालसुनरेशढिगआयोहै ॥
साम[1]राज राजकोभिषेक जिन फेर जग ॥
कीरति वरमदेवभालमें करायोहै॥ २० ॥

सवैया ।

रणरंगमहीपिसताशनिआ अबलौं नरमुंडनतालबजावैं ॥
अलिकैकचपिंगकपौललटीसुपिशाचनियांतिहनृत्यदिखावैं ॥
करिकुंभ[2]मृदंगनपौन बली घसि नाद अनेक सुपीथ सुनावैं ॥
इहभाँति सुनो नटनीजगमें रणरंगमही अबलौं यशगावैं२१॥
रसशांत प्रसन्न विनोदनके हित हेनटनी सुगुपाल बुलाये ॥
अब याहि सभा बहुनाटकजो धर स्वांग भले हम देहिदिखाये
नटनी तब एह कह्यो भरताहित स्वांगन मानवलेहु मगाये ॥
इह आहि अचंभ बड़ो मनमें, सुन आर्य्य एहु गुपालसुभाये२२
निजप्राक्रमके रणरंगमही जिन मंडल भूपनके सुभगाए ॥
पुनिकानलौं तानकठोरधनुंरणमंडलमें शरओघचलाए ॥
तिन बाणनके अरिखेत विधे सुतुरंगनके बहु पुंज गिराये ॥
निज आयुधधारमहीधरसे गजकोटिनकोटि सुभूमिरुलाए २३
पैदलसैन सुक्षीरनिधी भुजमंदरघात सुव्याकुलकीनी ॥
[3]तसैनपयोनिधिको मथिकेवल्लभावँविजयलक्ष्मीजिनलीनी॥
जिनके रणकी मुनिबृंदसभैअबलौं जसकीरति गाहि नवीनी॥
रसशांतविषेतिनकीमतिआर्य्यमोहिकहोकिहभाँतिसुभीनी२४

१ चक्रवर्तीराज ।　　२ गण्डस्थल　　३ कर्णसेन राजा ।
४ समरविजयलक्ष्मी ॥

सूत्रधार उवाच स्वपत्नीप्रति-

दोहा।

ब्राह्मणज्योतिस्वभावते, समस्वरूप जगआहि॥
कारणपाइ विकारभज, पुनि निज रूप समाहि॥२५॥
नृपकुल प्रलय कृशानुसम, चेदिपती जगआहि॥
चन्द्रवंशनृपराजको, दूरकियोपुनिताहि॥ २६ ॥
चन्द्रवंशनृपराजहित, उद्यम कियो गुपाल॥
मार विरोधी थिरकियो, राज गुपाल रसाल॥ २७ ॥

सवैया।

कल्पांत प्रभंजनक्षोभभयोसरितापतिज्यों सबशैलदबाए॥
कृतकार्य फेर गहे थिरता निजवेलकी भीतर आय ठराए॥
भगवंतके अंशजयेनरजे सभ भूतनकेहित प्रेम बढाए॥
नरमंडल ले अवतार मही कृतकार्यते रस शांति लगाय॥२८॥
भृगुनन्दनरामको भामनीपेख सुबाहुजवारइकीसखपाए॥
नृपशोणितनीर सुमांसवसाबहु पंकमई तटनी भटनाए॥
नृपनारि कुमार सुबूढनलौं करुणाबिन धारकुठार चलाए॥
घरभार उतार उखार कुलं नृप शांति भये तपमाहि लगाए२९

दोहा।

परशुराम जिम आहि यह, कृतकार्य्य गोपाल॥
परम शांतिनिष्ठा भजी, रसमें बडो रसाल॥ ३० ॥

१ चेदिदेशाधिपति राजाकर्णसेन। २ कीर्तिवर्मा राजाके राज्यको। ३ अवतार स्वरूप। ४ अस्थिगतमांस॥

जीत विवेक सुमोह जिम, बोधउदै जगकीन ॥
जीत करण बलराज तिम, कीरति वरमा दीन ॥ ३१ ॥

अथ नेपथ्ये कलकला शब्द ।

सवैया।

बीच कनातके बात सुनीसुमनोजबलीयह काननमाहिं ॥
कोपभरे मुख एहुकही नटनीचसुबोलतयोंमुखमाहिं ॥
जीवतहींहमरे जगमें तुम मोहकि हार कहें जनमाहीं ॥
पापि शिलूषविवेकहिकी जड मूल उखारदयोभवमाहीं॥३२॥
सुनबातशिलूषडरचो मनमें पुनि संभ्रमहेर सुनारि अलायो॥
रतिकंठभुजा घनपीनकुचालहिसंग रोमांच अनंग सुआयो॥
जगमादन सोभ अपार बनी मदघूमतनयन चले अलसायो॥
अब भागचले इह ठौरहिते सुनिकै ममवाकमनोधुनशायो ३३
इमभाख तजी रंगभूमि तिनो तब आय मनोज प्रवेश कयो॥
अलिकै कच नील कपोल लटी रतिकंठविषे हँसहाथदयो॥
हगकंज चढाइ उठाइ भुजा रतिनाथ महा उर क्रोध छयो ॥
भृत्ता᳚धम पापि सुजीवतमें रति नाहि विवेक सुकौनभयो ३४
तबलौं मनमाहिं विवेक रहे सभ आगमते उपजा इह जोई॥
जबलौं नहिं नीलसरोरुहिसें हगनारिकटाक्षलगे सर कोई ॥
नृप जीत तजे नवखंडमही घरनारि भजें कर जोर सुदोई ॥
चतुराननलौं जगमाहिं पिखे हगनारि अजीत नहीं भटहोई ३५

(१) नटाधम ॥

धौल जहाँ गृह ऊचबने गजदंतनमंच सुसेजसवारी ॥
मध्यबिराजत चंद्रकलासम वारिजनैन सुनूतननारी ॥
भूषन चंपकहार घने तनु चन्दन कुंकुमगंध उदारी ॥
चंदउदे तम दूरभये निशिमाहिं खिरी सुमनोजकीबारी॥३६॥
इह आयुध मोहि जेयंत सदा इन धारमलेजगआहिवलीको॥
इन होवत कौन विवेक अहै पुनि बोध उदै नहहोत कलीको॥
जन औरनकीजगकौन कथा धृत संयम जोजन जाइ गलीको ॥
दृगकंज फिराय पिखे युवती चित यों तरफै जनमीनथलीको ३७

रतिरुवाच ।

दोहा ।

आर्यपुत्र सुअतिबली, भाषैं मुनी अनेक ॥
महामोह भूपालको, याजगशत्रु विवेक ॥३८॥

काम उवाच ।

सवैया ।

तवनारि सुभावते संकभई प्रतिपक्षनते हमनाहिंडरें ॥
पिखयद्यपिफूलशरासन औसरमैं करभीतर आपधरें ॥
जन तदपि आयसु मोहिं उलंघ मुहूरत धीरज नाहिं धरें ॥
सुन वामउरू सुरदैत्यसभै जगभीतरहै वसमोहि करें ॥३९।

दोहा ।

जानत काम न नारि कछु, शृङ्गीऋषि वन माहिं ॥
मोसरचीत्तभ्रमाइयो, गयोभूप गृह माहिं ॥ ४० ॥

---

१ जयका हेतु। २ शर्देऔसे

ताकी कथा संक्षपते, कहों सुनो चितलाइ ॥
वामडरू संसामिटे, तोहिं निखल डरजाइ ॥ ४१ ॥

चौपाई ।

लोमपाद इक भूपति भारा । जाकोयश सबभौन मँझारा ॥
दरशथको बहु मीत कहींजे। जाको हेर अमंगल छीजे॥४२॥
ताके देशको बहु विस्तारा । वर्षा होइ न ताहि मझारा ॥
ताकी प्रजा दुखी सभ ऐसी। तपतअलपजलमछलीजैसी४३॥
विप्रजोतिकी भूप बुलाए । बर्षा होइ सुकौन उपाए ॥
विप्रनबहुविधिकीनविचारा ।भूपतिको इहभाँतिउचारा॥४४॥
शृङ्गीऋषिवन भीतर जोई ।आइ इहाँ तब वर्षा होई ॥
वहनिरपेक्ष महामुनिज्ञानी ।आवैकिहप्रकार रजधानी॥४५॥
लेन न ताको कोई जावे । शापअग्निते सभ डर पावे ॥
तब तिन वारवधू सुबुलाई । दानमानकर पासबिठाई॥४६॥
शृङ्गीऋषिवनजाहि अगारा। ताको लियावो नगर मझारा ॥
सुनकर बारवधू अकुलानी शाप अग्निते अति डरपानी ४७॥
पर भूपतिकी आयसु जोई । मेटि न सके कदाचित सोई॥
तब तिन एकउपायसुकीनो । नौकाबांधस्थंडेलकीनो॥ ४८ ॥
तामे रंभापुंज जराए। लाडूकरणपूरफललाए ॥
कहूं जलेबी कहूं अपूपा । कहूं सुबूंदी रची अनूपा ॥४९ ॥

१ ज्योतिषी। २ मृत्तिकाकाथडा। ३ घेवर॥

दोहा।

क्रितम बेल तामैरची, फूल पात बहु भाइ ॥
लाचीदाणेकी तहां, रची सुदाख बनाइ ॥ ५० ॥

चौपाई।

याविधधार अडंबर बाला । गई तहां जहँ विविन विशाला ॥
मुनिआश्रमते किंचित दूरा । नाका थापी नार गरूरा ॥ ५१ ॥
षोडशबरसनकी बहु बाला । गईं तहां जहँ मना विसाला ॥
लाडूकरणपूर फल जेते । पात पलाश धरे सभ तेते ॥ ५२ ॥
शृंगीऋषि तह नैन मिलाए । ध्याननिष्ठ मुखवद अलाए ॥
पगनूपुरधुनि सुनी सुजबहीं । नैन उघारे मुनिवर तबहीं ॥ ५३ ॥
मुनि उर जान वन्दना धारी । अरघ पादहित लियायो वारी ॥
गणिका तब मुख एह बखाने । हम ऋषिवर नहिं छुहे सआने ५४
थाफो नीर न चरण पखारो । हमरे तपबनफल मुख डारो ॥
करणपूर अरु लाडूखाए । शृंगीऋषिके मनविगसाए ॥ ५५ ॥
खाइ जिलेबी लाचीदाने । अहो स्वाद मुनिमुखो बखाने ॥
मिलकर गणिकागायन करें । मुनिवर जाने वेद उचरें ॥ ५६ ॥
तुमरे मुखसरोज मकरंदा । वेदधुनी उर जने अनन्दा ॥
पद क्रम जटाअपूर्वथारी । आप पढाई जो मुखचारी ॥ ५७ ॥
याविधिनिरखे तामुखओरा । ज्योंनिशचिते सुचन्दचकोरा ॥
अहो हमारे भाग सुनए । यह मुनि ब्रह्मलोकते अए ॥ ५८ ॥

---

१ करीहुई । २ पदक्रमजटा वैदिक मन्त्रोंके उच्चारण विशेषका नामहै ॥

याके बलकल ऐसे सोहै । तडितपुंज जन मैं मनमोहै ॥
बनफलमिष्टमधुरधुनिवेदा ।मनकोनिरखिलमिटावैखेदा॥५९।
सुंदर शीशजटा अतिकारी।मनो बिरंचि स्वहाथसँवारी ॥
तपको तेज भालमैं दमकैं । किरणासहितमनोशशिचमकै६०
हेमजनेऊ याके अंगा। स्वर्गफूल सोभे सरबंगा ॥
अहोपिताफलहित बनगए । याकेदरशन ताहिं न भए ॥ ६१॥
ऋषिआगमनऔसरकोजान। बारबधू तह कियो पयान ॥
वहु आई नौकाके पाही ।मुनिवर आयोआश्रममाही॥ ६२॥
शृङ्गीऋषि सुतआइ निहारा। रंचककरे न वेद उचारा ॥
अग्निहोत्रकी अग्नि सुजोई । नाहि जगांई निशिकोसोई॥६३॥
बारबधू जिहपंथ पधारी। दृष्टि तहाँ शृङ्गीऋषि धारी ॥
पूछ्यो पिता कहां मति गई। पढे न वेद नहीं कृतकई ॥ ६४॥
शृङ्गीऋषि तब बैन उचारे । पिताहुते कछु भाग हमारे ॥
ब्रह्मलोकते मुनिवर आए। नाहिसमश्मश्रुमुख निरमाए॥ ६५॥
ताको रूप निहार्‍यो जोई। अबहौ चीत चितारों सोई ॥
कोमल बलकल तनमें सोहैं। दोदो शृंग उरन मन मोहैं॥६६॥
शीशजटाकोमलअतिश्यामा। भाल तिलक हाटकढिगदामा॥
नाककरणमें छिद्र सुकीने । स्वर्गफूल तामें गुहिदीने॥६७॥
नयनसरोज दयारसभीने। सिंच सुधा श्रम करे सुखीने ॥
मेरीओर कृपाकर निरखे । प्रेमडोर मानो मनकरखे॥ ६८ ॥
याविधि वेद सुकीन उचारा। सुनिकर हर्‍यो सुचित्त हमारा ॥
ऐसे शृंगीऋषिहिअलायो। पितालख्योअबलाभरमायो ६९॥

---

१ मुखके बाल ॥

शृङ्गीऋषि बहुभाँति डराए। हेसुत ऋषि नहिं राक्षसआए ॥
ताके गीत सुनी नहिं काना। नातर तेरे हरहैं प्राना ॥ ७० ॥
याविधि मुनिवर बहुत डराए। पर शृंगी वहुरूपहि ध्याए ॥
मुनिवरभये प्रातपुनिकाला।गयो जबैबहुविपिनबिशाला ७१॥
तबपुनिगणिकाझुंडसुआयो। शृंगीऋषिपिखमोलझुकायो ॥
तुम अपने तप विपिनमझारी।मोहि लेचालो करुणाधारी७२॥
तब संगचल्यो मुनिवर ऐसे। प्राणनसंग जीव जग जैसे ॥
नैनकटाक्षसुछबिहिकपोला। निरखिभयोऋषिकोमनलोला७३
ताकी मंदगती झुनकारा। सुनिसुनि ऋषिमनभजेविकारा॥
नौकाभीतर बैठो जबही। पहुँचो लोमपादपुरतबही ॥७४॥
मुनिवर नगर जबै पगधारा। बरषा भई सुतहाँ अपारा ॥
यहविधि तपको जाहि प्रभाऊ। अबलाऽधीनभयोमुनिराऊ ७५
शांता भूपतिदुहिता जोई। ताहि वरी पुर भीतर सोई ॥
याकी कथा बहुतविस्तारा। कहांलगेमम करों उचारा॥७६ ॥

दोहा।

मानवकी गनती कहां, देवनमैं प्रधान ॥
त्यागे धर्म क्षणेकमें, रंच लगा वो बान ॥ ७७ ॥

सवैया।

गौतमनारि सुजांरसुरेश्वरजाइ भयो सर मोहिंचलायो ॥
वेदपढे चतुरानन जो रतिको हितसो दुहिता प्रति धायो ॥

---

१ उपपति । २ आत्मतनया शतरूपा ॥

इंदु भंजीगुरुकी अबला बुद्धसो सुतताहिके बीच उपायो ॥
कौन अपंथनपां धरेजगमो सरजाहिकोउ चीत भ्रमायो ७८॥

दोहा

याविधिके अबलाहने, तपी बडे बलवान ॥
गुलाबसिंह वैरागको, करें मूढ अभिमान ॥७९ ॥

रतिरुवाच

सवैया।

सुत आर्य यद्यपि तूंभुजमैं जगजीतनको वल आपधरें ॥
जग होइ सहायक जाहिबली पुनितां अरिते बलवंत डरें॥
सुनिये यमआदिक आठ बजीर विवेकसहायक वेदररें ॥
बहु जंग उपाय करेंसुनियो इहते डरमैं हम नीतडरें ॥८०॥

काम उवाच ॥

सवैया।

भामिनि शय विवेकहिकेयमआदिकआठ अमात सुनाये ॥
तेरणरंग महीपहिले हमने सबठौरन ठौर दबाए ॥
कौन अहै जगभीतर सो हम जीवत ताहिको नाम अलाये॥
वामउरू तज चिंतसदा तुमक्योंमनमै अरिते डरपाये॥८१॥

दोहा

कोप आगारीरहे जो, कौन अहिंसानार ॥
ब्रह्मचर्यको मैं सुनो, क्षणमहि डारों मार॥ ८२ ॥

१ गुरु बृहस्पतिकी स्त्रीको चन्द्रमा सेवताभया। २ यमनियमाऽऽसन प्राणायामप्रत्याहार धारणा ध्यानसमाधि। ३ क्रोध। ४ पर प्राणिवियोगानुकूल व्यापारका नामहिंसा ताका अभाव अहिंसा। ५ आठप्रकारके मैथुनका त्याग ब्रह्मचर्यहै ॥

लोभ[1] जबै करमै धरे, चन्द्रहास बलधार ॥
सत्य[2] असतेय[3] अपरिग्रह[4], भामिनि सुएनिहार ॥ ८३ ॥

सवैया।

यमनेमसुआसनप्राणयमं प्रत्याहारबली जगध्यान अलाये॥
धारणा और समाधिसुनो चितहोइ इकाग्रतौ उपजाये ॥
चितभीतर रंच विकारकरौं इनको जडमूल सुदेहु उठाये ॥
इन जीतन हेतु रची अबला यमनेम तबै हमरेवशआए॥८४॥
दूरबिलोकन नारिनिको अरु ताहि संभाषन दूर रहे ॥
हास बिलास सकेल[5] अलिंगन नाहि इकंत सुबात कहे ॥
जन संयमवंत कहावतजे तजसौध[6] तपोवन जाइवहे ॥
चित्तमाहि चितारतजोयुवतीक्षणमैंमनताहि बिकारगहे८५॥
मोह अमातसुमात्सरमद[7] दंभ तथा पुन लोभ अलाए ॥
कारयमादि बजीर लय वहिकान इकंत सुमंत्रदिढाए ॥
मोहमहीप अधर्म बजीर यमादिक गोप लगे तिनपाए ॥
जो यमनेम करेजगमैं, हरिकेहित नाहि सुलोक दिखाए८८॥

रतिरुवाच ॥

दोहा

शमदम और विवेकलौ, कामक्रोध मद मान ॥
मैं सुनियो निजकानमैं, एको जनम अस्थान ॥८७॥

---

१ पर द्रव्यके हरणकी इच्छा का नाम लोभ है। २ यथार्थभाषण का नाम सत्य है। ३ चोरीके अभावका नाम अस्तेयहै। ४ खोटेप्रतिग्रहके अभावका नाम अपरिग्र है। ५ घूतदिक्रीडा। ६ मन्दर। ७ पर गुणोंमें ईर्षा और मद कहिये मनका गर्व ॥

काम उवाच ॥

सवैया ।

उत्पत्तिकोस्थानसुएकअहे मनसोजगभीतर तातअलाया ॥
हम हैं पुनभ्रातविमात सुनो वहुगोप प्रकार बने अबगाया ॥
सुन पूर्व ईश्वर संग कीयो, निजनारिबखानत ताहिं सुमाया॥
जिनते उत्पत्ति भई हमरी मननाम वहीसुत ताहि उपाया८८॥
मन तीनहु लोकसु आप रचे पुन ताहि विषे कुल दोइ उपाई ॥
मन एक प्रवृत्ति कहे पतिनीसुनिवृति तथा जग दूसरि गाई ॥
मोह प्रधान प्रवृत्ति रची कुल तीनहु लोकनमाहिं फिलाई ॥
सुविवेकप्रधाननिवृत्तिजनीकुलसो बिरलीजगमाहिचलाई ९८

रतिरुवाच ॥

सवैया

सुत आय जो इहभाँति अहे जगभीतर एक सुताततुमारा ॥
किय कारण बैरभयो तुमरो ध्रुजमीनकरो ममएहु उचारा ॥
तिह भ्रातनमें इहभात सुवैरन मोहि सुन्यो यह कानमझार ॥
कविसिंहगुलाब कहे रति नाइसुनो रतिवैरकोकारणभारा९१॥

कामउवाच ॥

सवैया ।

जे इक आमिषते निपजे तिन वैर प्रसिद्ध कऱ्यो जगमाही ॥
भूमिनिमित्त लरे कुरुपांडव भूप खपे जिनके रणमाही ॥

---

१ दूसरी माता ॥

भारत खंडकी नूतन नारि भई विधवा जिन संगरमाहीं ॥
होवतहीं यह बात आई कछु नाहिं भई सुनई भवमाहीं॥ ९२॥
हमरे मनतात सुपूर्व एरति तीनहुलोक सुआप बनाए ॥
हमहैं अतिवल्लभ तात हिके इहते हम तीनहुलोक दबाए ॥
शम औ दम और विवेक पिताबलहीन पिखे वनवासपठाए॥
अबते अघवंत उपाय करें पितभ्रातनमूलसु देहु उठाए॥९२॥

रतिरुवाच ॥

सवैया।

सुत आर्य क्यों पुनि पाप इसो मतिहीनकरें बहुसंग तुमारे॥
उर द्वेष बध्यो तिनके अतिहीं इहभाँति चहें जगपापकरारे ॥
अथावा इह कौन उपाय सुनो धुजमीन तुम मन माहिविचारे॥
इह भाँति सुने रतिवाकजबैतबबोल उठे रतिप्राणपियारे॥९३॥

काम उवाच ॥

दोहा।

भामिनि गूढ सुबीजइक, है पुन कह्यो नजाइ ॥

रतिरुवाच ॥

आर्य सुत क्यों नाकहें, मोको तूं प्रगटाइ ॥ ९४ ॥

काम उवाच ॥

दोहा।

रति तूं नारिसुभावते, भीरू अतिडरपाइ ॥
वैपापी दारुणकरम ,तोपै कह्यो नजाई ॥ ९५ ॥

रतिरुवाच ॥

दोहा।

आर्यसुत सोकौन बहु, कैसोकरम कमाइ ॥
बिनभाखे थल मीनसम, मेरो चित्त तरफाइ ॥ ९६ ॥

काम उवाच ॥

सवैया।

भामनि नाहिडरैं उरमैं हत[१] आशविवेक सुआश ठराई ॥
याकुलमैं निसकालसमाविद्याजिह[२] नाम सुराक्षसी काई ॥
लेवहिगी अवतार सही उरभीतर नाहिं दया कछु राई ॥
होवतसत्य भविष्यकथा जनकी[३] श्रुति याजग एहु अलाई ९७

रतिरुवाच ॥

दोहा।

हा धिग हमरे कुलविषे, पिसताशीसुमहान ॥
उपजेगी उर कंपहे, चलदलपत्रसमान ॥ ९८ ॥

काम उवाच ॥

दोहा।

भामनि क्यों उर कंपहै, लोककहैं यह बात ॥
जनमु राक्षसी होइगो निश्चैनहिं बिख्यात ॥ ९९ ॥

रतिरुवाच ॥

दोहा।

नाथ बखानो एहु तुम, जो उपजे पुन सोइ ॥
याजगमैं अवतारलै, कामकरेगीकोइ ॥१००॥

---

१ नष्ठ होवे आशा जिसकी। २ ब्रह्मसाक्षात्कार औ क्रूर कर्मके करणते राक्षसी कहीहै। ३ पुरुषोंकी वार्त्ताहै निश्चय नहीं।

काम उवाच ॥

सवैया।

भामिनि यों सुनिये जगमैं इहवाकअहै विधिब्रह्म अलाया ॥
पुंस अंसंगकहैं जिहको तिहनारि अहे जगभीतर माया ॥
नाहिं छुहे तिह संग कबी मनं वल्लभ ताहिंविषे सुत जाया ॥
तां उपरंत सुनो गजगामनि नाथं इहे पुनलोक बनाया १०१॥

दोहा।

कन्या ताते होइगी, विद्यानाम कहाइ ॥
तातमात पुन भ्रातकुल, लए सकल बहुखाइ १०२॥

कविरुवाच

दोहा।

त्रास कंप रतिको भयो, बोली अतिभय आहि ॥
भरताके गलसों मिलीं, आर्य्यसुत परिपाहि ॥१०३॥

सवैया।

रतिसंगमकोसुखआहिजोईसुखस्वैंगतिकैपुनकामदिखाए ॥
तनमाहि मनोजरुमंचभये युगतारक नैननकै तरलाए ॥
घनपीनपयोधर नारि मिले शिवके रिपुतौ मनमैं हरषाए ॥
मणिगुंजत कंकण हाथविषेरतिकंठभुजामनमेंविगसाए१०४॥

१ असङ्गोह्ययं पुरुषः। इतिश्रुतेः। २ शंकाः-पुरुषके साथ संबन्ध रहित हुई, माया-मनको कैसे उत्पन्न करेगी।समाधानः-पुरुषके साथ संबंध रहित हुई भी माया मनको उत्पन्न करे है दृष्टान्तः-जैसे चुम्बकपाषाणके साथ लोहशिलाकाका संबन्ध नहीं भी है तौ भी चुम्बककी क्रियाके पीछे क्रिया करे है यह लोकमें प्रसिद्ध है तैसे पुरुषके साथ संबन्ध रहित हुई भी माया इच्छामात्रसैं मनको उत्पन्न करेहै-काहेतें(अघटितघटनापटीयसीमाया)है याते मायामें सभकछु बन सक्ते है। ३ मनने। ४ मनमें प्राप्त।५ नयनोंके दो तारे श्यामतरकहिये अति चंचल लगाये दीये ॥

कामउवाच ॥

सवैया।

तव संगममोद जने मनमैं, अरु मोह महाँ उरमैं उपजाए ॥
इमभाष मनोज प्रमोद बढे रतिको दृढ कंठ सुफेर लगाए ॥
हम जीवत कौन बली जगमें पुन आत्मविद्या जो उपजाए ॥
जग कौन विवेकको नाउलए रतिभीरु कहो तुम क्यों डर पाए

रतिरुवाच ॥

दोहा

विद्याकन्या राक्षसी, ता उत्पत्ति जोइ ॥
तुमरे वैरी जगतमें, किहविधि चाहै सोइ ॥ १०६ ॥

कामउवाच।

सवैया।

सा[2]दुहिता श्रुतिनारिविषे, खलराय विवेकप्रिये उपजाए ॥
संग[3]प्रबोध शशी पुन भ्रात, सुहंसगते तिहमाहि उपाए ॥
ताउत्पत्तिविषे पतिनी सुशमादिक आप सहाइक आए ॥
ते उपवास करैं तपसाधृत उद्यमतीरथ देव मनाए ॥ १०७ ॥

रतिरुवाच।

दोहा।

आत्मनाशक विद्या, ता उत्पत्ति जोइ ॥
काहिसराहै दुष्टमति, शंका पापन होइ ॥ १०८ ॥

---

१ विषयांतरके विस्मरणको उत्पन्न करता है। २ अनावृत ब्रह्माकारान्तःकरणवृत्ति रूपा कन्यानाम विद्या। ३ अनावृतब्रह्माकारान्तःकरणवृत्युपहितचैतन्यरूपप्रबोधचन्द्रमा भ्राता।

काम उवाच ॥

सवैया।

रतिजे कुलनाश प्रवृत्तिभये, वहुपापकरें नहिं पाप डराए ॥
मुख नीत मलीन रहे तिनको, उपजे निजतात सुआतमघाए ॥
बलि पावकधूम सुमेघभयो फिर धूमधुजंहन आप खपाए ॥
कुलकंटक आहिविवेक सुनो नितपापकरेनहिं रंच लजाए १०९

(अथ नेपथ्ये कलकलाशब्द)

विवेक उवाच ॥

सवैया।

आहिदुरातमकामकलंक सुतूं धरमातम आप अलाए ॥
ते अघवंत सुपाप करें इम भाष अघी हमको सुठराए ॥
नाहिलयो मन तातमतो जिम मूढ मनोज सुनो चितलाए ॥
तातभयो सुतमोह अधीन सुमारग वेदको दूर भुलाए॥ ११०॥
कार्य औ अकायको गुरु जोन पिखे उरमें गरवाए ॥
वेदविरुद्ध सुपंथविषे मनके मदकै जब पांउ टिकाए ॥
ताहिं त्याग सुवेद कहे मनुस्मृतिमें पुन एहु बताए ॥
बीच पुरानन व्यास कहे ऋषि पूर्वले पुन एहु अलाए॥ १११॥

दोहा।

पिता गुरू मत त्यागकर, बडभागी प्रहलाद ॥
मुक्ति पाइ बन्धन तजे, हरिके सेवसु पाद ॥ ११२ ॥

---

१ अग्नि। २ मन। ३ श्लोक-गुरोरप्यवलिप्तस्य कार्याऽकार्य मजानतः। उत्पथ प्रतिपन्नस्य परित्यागो विधीयते ॥ अर्थयह:-जोगुरु अहंकारादिकदोषोंकरकै उन्मत्त-भावकूं प्राप्तभयाहै तथा जो शास्त्रकरणेयोग्य अर्थकूं तथा शास्त्रनिषिद्ध अकरणेयोग्य अर्थकूं जाणतानहीं तथा शास्त्रनिषिद्ध मार्गमेंप्रवृत्तहोवैहै ऐसे गुरुका शिष्यने परित्याग करणा।

कवित्त।

तात जो हमारो सुहंकारके अधीन भयो,
कार्य अकार्य न रंचक विचारियो ॥
जगतको पति जो परमात्मासु तात निज,
ताहिको सुबाध जगशृंखलमें डारियो ॥
मोहमदमान निसदिन सनमान कर,
छोडिनो सुदूरबंध दृढ बिसतारियो ॥
ऐसो मन तात जोई हतएन दोष कोई,
कऱ्यो हमत्यागनहिं ताहिमतो धारियो ॥ ११३ ॥

सवैया।

इहऔसर कामविलोकनके रतिकेप्रतिएहु सुवाकअलायो ॥
हमरेकुलमेंसुप्रधानबडो मति संगिमिल्योसुविवेकहिआयो॥
गजगामनि आवतहै इतऔर चलेमृगकेपतिज्योंहुलसायो ॥
शिवज्यों तुहिनाचलकीतन्या,मतिसंग मिलेइहभांतिसुहायो।

दोहा।

रागादिक जिन बस किये, कीरतिवंत उदार ॥
उर अतिकोप्यो मानधन, मनो निरादर धार॥ ११५ ॥

सवैया।

तन दूबर एहुविवेक पिखो रतिचित्त कठोरमहादुःखदाई ॥
कलेषीमतिमाहि सुयोंलसकै तुहिनाचलज्यों शशिदेतदिखाई
इहकारणते हम योग्यनहीं इहठौर निवासचले सुपलाई ॥
रतिसंग मनोज सुभागगए,मतिसंग विवेक बरे तिहआई ११६

---

१ रागादिरूपकालख।

विवेकभूपतिरुवाच ॥

दोहा।

सुने प्यारी कान तव, कामबडेमदबैन ॥
हमै बखाने पापकृत, दुष्टात्मयहमैन ॥ ११७ ॥

मतिरुवाच ॥

दोहा।

आर्यसुत निजदोषको, जानत नाहिं सुकोइ ॥
दोष बखाने औरको, मूढ जगतके लोइ ॥ ११८ ॥

राजोवाच ॥

सवैया

चित आनंदनीतनिरंजनजो जगनायकजाहिसुआगमगाए ॥
मदकामहंकारपरायणने तिनको जगभीतर बन्धन पाए ॥
अतिदीनदशा तिनकी सुकरीपुन सुकृतवंतसु आप कहाए ॥
हम ताहि छुडावन माहि लगे अघवंत अहो खल मोहि अलाए॥

मतिरुवाच ॥

सवैया।

सुत आर्य्य जो परमात्महै सहजानंद सुंदरवेद उचारे॥
बहुनित्यप्रकाश महारविसों सुत्रैभौनन माहि सुजाहि प्रचारे॥
इहभांति सुनो परमेश्वरमैं किहभांति इने तिनबन्धन डारे ॥
दुःखसिंधुपरात्मडारदयो किम ताहितजे गुण आपउदारे १२०

राजोवाच ॥

सवैया।

अति धैर्यवंत उदारबडो उरसत्य सदा गुणसिंधु सुगाए ॥
स्वाच्छसदा उरनीतबसे सुमहालक्ष्मी सिर छत्र झुलाए ॥

मति धैर्य शीलतजेक्षणमेंसुनभामिनिनारि न जाहिभ्रमायो ॥
अब औरकी बात कहाकहियेनिजनारिपरात्मआपभुलायो ॥

मतिरुवाच ॥

सवैया ।

सुतआर्य्य जो तमहोइ बडोरबिकोनहि छादसकै पुन सोई ॥
तिम आत्म नित्यप्रकाश महा जिनके सम दूसर और न कोई॥
सुखसागर नीत उजागरहै अज्ञान कहो किहभांति सुहोई
अब दूरकरो करुणाकरकै इहशंक बडी उरअंतर पोई॥ १२२ ॥

राजोवाच ॥

अनंगशेखर छन्द ।

विना[१]विचार सिद्धए प्रसिद्धवारयोषिता,
समान नाममायाविला[२]सिनीबखानिए ॥
मणिसफाटकंयथासुदेवऊजलोमृषा[३],
सुहावभावकैतथाप्रवंचनासुठानिए॥
ताहिके सुसंगतअसंगतजु देवकी,
स्वरूपसिद्ध नित्यहै मनाक नाहिंहानिए॥
तथापि गाँढसंगके प्रसंगविक्रियाभई,
छुटीसुधीरता तबै अधीरता सुजानिए ॥ १२३ ॥

मतिरुवाच ॥

दोहा ।

कारण कौन सुभाषिए, जाकर करे विकार ॥
पुरुषपुरातनसोंवधू, जाको चरित अपार ॥ १२४ ॥

---

१ नाम अनिर्वचनीयहै। २ क्रीडादिविलासोंकेकरनेवाली। ३ मिथ्याहावभावकरके असत्यपदार्थोंको सत्यरूपदिखावतीहुयी पुरुषोंको वंचनकरती ठगती है। ४ अत्यंत संगसे विकार प्राप्तभया।

राजोवाच ॥

दोहा।

माया कारण काजको, चाहितनाहिंसुकोइ ॥
नारी जान पिशाचनी, यही सुभाव सुहोइ ॥ १२५॥

सवैया।

मोहतहै कबहूं अबला मदसोंसु बिंडबन फेरकरे ॥
कबहूं पुन ताडतहैं अबलाकबहूं हँसके पुन अंकभरे ॥
सुविखादकरे कबहूं कबहूं अतिदीन मनोरिद माहिबरे ॥
दृगवामकटाक्षनकै अबला कहुकौनहकौननचीतहरे॥ १२६॥

दोहा।

है कछुकारण कौन पति, कहौं सुनों अब सोइ ॥
दुराचारइन चित वियो, करयो विचारसुकोइ॥ १२७॥

मायोवाच ॥

सवैया।

अब जोबन मोहि बिलाइगयो पुनदेव पुरातनहै जरठायो ॥
अब मोहि विषेरस आहिकहारस बेमुखजोबनमैं नरसायो ॥
अब और उपाय बने नकछू मन पूत बने अबराजदिवायो ॥
इहमातमतो सुविचारमनेमन पूत तबैनिज तात मिलायो १२८
नवद्वारनके पुर ताहि रचे मन आप सुनो तिनबीच बसाए ॥
इकरूपहुतो परमातमजो बहुभांतिनकै पुरमाहि फसाए ॥
सुकरे मनकार्य्य आपजितेपरमात्मके पुनमाहि ठराए ॥
सुजपाकुसंममणिमाहियथाहनश्वेतगुणंगुणलालदिखाए॥ १२९

१ कार्य। २ इस प्रकार मनने माताके मतको बिचारकर तथा मनरूपपुत्र तात परमेश्वरके साथ अभेद संबन्धवाला होकर।

मतिरुवाच ॥

दोह।

आर्य्यसुत यालोकमैं, जैसी मात प्रवीन॥
ताको सुत तैसो भयो, कहो देव कतकीन॥ १२० ॥

राजोवाच ॥

सवैया।

तबचीतको पूतहंकार बडो नेपिता परमातमकोजगगायो ॥
अतितोतलबैनगयो ढिगजो हसके परमातम कंठ लगायो ॥
तब भूलगयो परमात्म आप भवमोहभयो इम आप अलायो॥
इह तात इहै ममयात अहै इहखेत इहै सुकलित्रसुहायो १२१॥
यहपुत्र सुमित्र अरात बडो पुन यावसुधा बलँ आहिहमारे ॥
गज अश्वपशू यह कोशँ अहे पुनएहुसुहृदसुबन्धुपियारे ॥
चितको फुरणों जिहभांति भयो तिमदेव परात्म आपन धारे
अज्ञान मई बहु नींद भई स्वप्ना बहु भांतिन भांति निहारे १२२

मतिरुवाच।

दोहा।

आर्य्यसुत परमेश्वर, दीरघनींद बिकार॥
बोधँ जनम किह भांति पुन, होवे मोहिउचार॥ १२३॥

कविरुवाच ॥

दोहा।

सुनत विवेकमहीपको, लाज भई उरभार ॥
कीन अधोमुख तासमैं, धरणीओर निहार ॥ १२४॥

१ मन। २ पौत्रा। ३ सेना। ४ खजाना। ५ प्रबोध।

मतिरुवाच।

दोहा

आर्य्यसुत किहहेतते, गुरुतरलज्जातोहि ॥
नम्रसुकंधर तेभई, भाषो कारण मोहि ॥१३५॥

राजोवाच।

दोहा।

नारिनको बहु ईर्षा, होवत जगतमझार ॥
साऽपरा[1]रधजन आप पिख, कहों न तोहि उचार॥१३६॥

मतिरुवाच॥

दोहा

रसप्रवृत्तिकै धर्महित, करे कछू पति प्राण॥
बहुऔरे जगयोषिता, करे कां[2]ज तिहहान॥१३७॥

राजोवाच॥

दोहा।

मति प्यारी इक औरहै, मान[3]न मेरी नार॥
उपनिषत सुनामबखानिये,सुंदररूपउदार॥ १३८॥

चौपाई।

बहुदिनकी बिछरीहै प्यारी। मोहि असूया दुःख उर भारी॥
शमदम जो अनुकूलह होई।तौउपनिषत संगमम होई॥१३९॥
हेमति तूं जगविषे निवारे। एक महूरत मोन सुधारे॥
जाग्रत स्वप्न सुखोपतविलाई। मैंप्रबोधसुत लेहु उपाई॥१४०॥

---

१ दूसरीस्त्रीके संगसें अपनेको अपराधसहित देखकर। २ पतिके मनवांछितकार्य।
३ स्त्रियोंको ईर्षाकृत जोंकोपहै ताका नाम मान है तिससमानवालीका नाम माननहै।

दोहा।

उपजतही प्रबोधसुत, करे बन्ध सभहान ॥
बन्धनमुक्ति विराजही, परमातम भगवान ॥ १४१ ॥

सवैया।

सुत आर्य्यजो प्रभको दृढबंधनहैं दृढग्रन्थि महादुःखदाई ॥
ताअबला तव संगमते सुतबोधभये बहु बन्ध मिटाई ॥
पति नीतभजो तिनसंगमको अब वेगिमिलोकिम वेर गाई ॥
सुतआर्य्यनीतरमोतिनसोंममचीतप्रसन्नभयोहुलसाई ॥१४२॥

राजोवाच।

सवैया।

भामिनि जो यह बातिभई तबे सिद्धमनोरथआज हमारे ॥
हैजगआदि सुएक विभू परमात्मजा श्रुतिपुंज उचारे ॥
ताहि करे बहुखंडजिनोपुरदेहनमै बहु बन्धनडारे ॥
चिदईशदयोमृतकोपदहा अबतेईबनेजगभीतरमारे॥ १४३ ॥

कवित्त।

ब्रह्मकेजोंभेदकहैंखेदकअनेकविधि,
प्राण[1]अंतप्राश्चित ताहि करवाइये ॥
विद्यासरूप[2] प्राश्चितयों अनूपहोइ,
जीवब्रह्म एकता सु तबी मोक्ष गाइये ॥
कार्य[3]के सिद्धहित शांति औ दमादिजेई,
ताहताह तीरथमै बेगसु पठाइये ॥

१ प्राणोंका नाशरूप। २ ब्रह्माद्वैतसाक्षात्काररूप। ३ प्रबोधकी उत्पत्तिरूप।

ऐसेमतिमान मति पति तौबखानकर,
गएभौनऔरपिखजाहिसुखपाइये ॥ १४४ ॥

सवैया।

मतिसंग विवेक विचारकियो जगभीतरजोजनकोसुखदाई ॥
जिहसों सभजीवकी बन्धमिटे परमात्मसंग सुबेग मिलाई ॥
तपसातटतीरथजोगभजे उपजे सुतबोध बडो जसदाई ॥
कविसिंहगुलाबसु एहकथा प्रथमै यह अंक निरंतरगाई १४५॥

दोहा।

गुलाबसिंह मति पति मतो, जानमोहभूपाल ॥
दंभकलादिक पठेगो, तीरथहनन विसाल ॥ १४६ ॥

इति श्रीमन्मानसिंहचरणशिक्षितगुलाबसिंहविरचिते प्रबोधचन्द्रोदयनाटके
प्रथमोऽङ्कः समाप्तः ॥ १ ॥

इति श्रीमदुदासीनवर्य्य परमानंद शिष्य गुरुप्रसादविरचिता प्रबोधचंद्रोदय नाटक
प्रथमांऽकटिप्पणिका समाप्ता ॥ १ ॥



ॐ श्रीगणेशाय नमः ।

श्रीगुरुभ्यो नमः ।

अथ द्वितीयोऽङ्कप्रारंभः ॥ २ ॥

दोहा ।

असुरबिदारे जाहि जग, देवनकियो उधार ॥
तारघुनायक विमल पद, बन्दों वारंवार ॥ १ ॥

सवैया ।

तब दंभको स्वांग भयो अतिसुदरजाहिपिखेजगशीशनिवाए ॥
करसैननहीं समुझावतहै सभपेखत राजसभा महिआए ॥
मुख एहुकही महा मोहबली सिरहाथधरे जगमाहि पठाए ॥
सुत दंभ अमातन संगबिचार विवेक कियोवहु होननपाए२ ॥

महामोह उवाच ॥

सवैया ।

इह विवेक विचारकियो सुप्रबोध बलीसुतलेहि उपाए ॥
ताहिनिमित्त सुतीरथमैं, शम औ दम आप विवेक पठाए ॥
है हमरे कुलनाशनिमत्त इहै जगमाहि विरंचिबनाए ॥
तुव होइ सुचेतउपायकरो जिहते इहनाशनिमित्तमिटाए ॥३॥
तिन तीरथमाहि बनारसजो बहु मोक्षनिमत्त विरंचिबनाई ॥
शिवकी नगरी सुतदंभवरो सुकरो तुम जाइके एहुउपाई ॥

---

१ विषयोंमें अत्यंत आसक्तिका हेतु जो अहंमम अभिमान हैं ताका नाम महामोहहै.

चहूं आश्रमकी कल्याणमिटे जिहते नह मोक्ष सुहोवनपाई ॥
बस मोहि बनारस एहुकही सभस्वामीकह्योसुकरचोममआई४

दम्भ[१]उवाच ॥

दोहा।

जाहि निवास सुमैंकरों, सुनो तिनोकी गाथ ॥
मनमथके उत्सवभजें, लोक निवावें माथ ॥ ५ ॥

कवित्त।

वारवधू भौननिसबसमदपानहास
कामके कलोलनिसों जामिनी बिताइ है ॥
चाँदिनीसुरात मनमत्थके हुलासभए,
नारिनके संगसु अनंगसुख पाइहै ॥
नाइ प्रातकालमले अक्षत लगाइ भाल,
धूरत सुबडो सबलोगनि रिझाइहै ॥
दीषत सर्वज्ञ पुन तापसी ब्रह्मज्ञ यह,
हव्यवाहहोमहम कदीनचुकाइहै[२] ॥ ६ ॥

दोहा।

योंदिनम वचत जगत, निसमैं रसकरसाल ॥
महामोह भूपालको, मैं कृतकीन बिसाल ॥ ७ ॥

कविरुवाच।

दोहा।

धाम बनारस गंगतट, बैठे दम्भ उदार ॥
कोइक आवत देखिकर, बोले वचन विचार ॥ ८ ॥

---

१ आपने महानूपनेकी सिद्धि वास्ते लोकोंके समीप आपणंकूं अत्यंत धर्मात्मापणे करकै जो प्रसिद्ध करणा है ताका नाम दम्भ है। २ निरंतर हमारा अग्निहोत्र है।

दम्भ उवाच ॥

सवैया।

कौन उलंघ भगीरथिको इत आवतहै 'सरितातटमाही ॥
ज्वाल मनोअभिमानहकी जन तीनहु लोक ग्रसेमुखमाही ॥
वाक कहे इहभांति मनो सुदखावतहै सभको जगमाही ॥
बुद्धि बडी दमके उरमैं सभको उपहास करे मनमाही ॥ ९ ॥

कवित्त।

राढा जो प्रसिद्ध देश दक्षणकलेश हर,
तिन हीते आयो यह ऐसे मनआइहै ॥
आर्य्य अहंकार सुहमारो तहांनीतबसे,
समाचार लेहु कछु मोहिको सुनाइहै ॥
ऐसे मन दंभ सुविचार नीके करे तब,
आयो सुहंकार चाल हंससी सुहाइहै ॥
अहोबहुमूरख जगत यह छायो सभ,
ऐसे सुहंकार मुख बैनन अलाइहै ॥ १० ॥
भटपाद मतको नजानत अजानलोक,
नाहि प्रभाकरको मरम पछानई ॥
तोतांतिकगंभीर मत धीरनहीं पारलैहे,
सालँकको ततज्ञान कोई नहीं जानई ॥

१ मीमांसकभट्टपाद-देहादिकोंसे भिन्न जडचेतनरूप आतमा मानेहैं।२पूर्वमीमांसाका
एकदेशी प्रभाकर-देहादिकोंसे भिन्न ज्ञानगुण विशिष्ट हुआ आतमा चेतन मानेहै। ३
कौमारिल शास्त्रके तत्त्वको नहीं जानते।४ शारिकनामग्रन्थके तत्त्वज्ञान कहिये सिद्धांत-
को अर्थात् शांतत मुनिके मतमें वासुदेवही प्रथम प्रकृतरूपही तत्त्व है ताके ज्ञानसे
शून्य है।

वेदव्यास[1] वाकपति कपिलकणादमत,
और जो महोदधिको मत कवि भानई ॥
महावृत्ति[2]ना निहारे पुन ब्रह्मको विचार,
कहा नाम नर[3]पशु सभ ऐसे हमजानई ॥ ११ ॥
एहै[4] जो पेखये महानमान बोझभेर अति,
महापशु बुद्धिकछु अरथकी नाइहै ॥
कटिमैं पीतांबर अडंबतोखूबकरै,
सामवेद धुनि पुन ऊँचे सुर गाइहै ॥
पूछिये जु बात तु रिसात मन क्रोधभये,
फेरफेर मूढ वेदपाठ न सुनाइहै ॥
वेमुख आचार श्रुतिचारको विचारकहा,
जीव काके हेत मूढ वेदन बहाइहै ॥ १२ ॥
औरठौर गयो पुन कौतुक सुनयो पिख,
बोलियो हंकार सुगुलाब पहिचानिये ॥
नामतो सन्यास मार्ग[5]भिक्षा विलासकरैं,
यही जतीनाम लोक माहितो बखानिये ॥

---

१ वेदव्यासका वेदांतमत तथा वाचस्पतिका मत औ कपिलकृत सांख्य शास्त्र का मत तथा कणादकृत न्यायशास्त्र का मत तथा महोदधि कहिये शेषप्रणीत भाष्यकामत। २ पाशुपत शास्त्र संहिता नहीं देखी तौ ब्रह्मका विचार सूक्ष्म होनेते अति कठिन है। ३ सर्व मनुष्यरूप पशु है सो शास्त्रमेंभी कहा है:-

श्लोक-आहारनिद्राभयमैथुनानि, सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्॥ज्ञानंनराणामधिको विशेषो, ज्ञानेन हीनाः पशुभिःसमानाःइति।इन सर्वमतोंका अर्थ विस्तारभयसेलिखा नहीं ४ शुद्ध वेदपाठी ब्राह्मण। ५ भिक्षामात्रवास्ते यतीपणेको ग्रहण किया है नही मुक्तिके वास्ते।

मूंड[1] तो मुडाए नाम पंडित कहाए कछु,
ज्ञानहूं न पाए करवेदभाष्यठानियें ॥
कीनेहैं व्याकुल विदांतके प्रकरणसभ,
आवतहै हास मुहि यहि सुनि वानिये ॥ १३ ॥
प्रत्यक्ष[2]तेविरुध अरथ भाषत वेदांत सभ,
एकही अखंड ब्रह्म दूसरो न गायोहै ॥
ऐसे जो विदांतशास्त्र मानतप्रमाण मूढ,
बौद्धनके ग्रन्थनमैं प्राध कौन आयोहै ॥
सेवरा सन्यास बौद्ध ग्रन्थ औ विदांत एक,
भिन्न भिन्न नामइक छलके चलायोहै ॥
तिनहूंके संग पुन बोले महापाप चढैं,
ऐसे मुख भाष पांउ आगे सुउठायोहै ॥ १४ ॥
एही शैव[3] पाशुपत आगम सुशैव रति,
रासभसमानतन भसम लगाइहै ॥
पशुहै अदंड लोकमाहिं सुरखंड करें,
इनसों प्रभाष नर नरक सुजाइहै ॥
शैव पाशुपतके निहारे होइ पाप अति,
पेखिये सुनाहि इन ऐसे बुद्धि गाइहै ॥
गुलाब सिंह देखिकै हंकारकी विसाल छवि,
लोगनिके पुंज पुन आगेही पलाइहै ॥ १५ ॥

---

१ नहीं मनको मुण्डाया–पण्डित कहाते है परन्तु पण्डित नहींहै। २प्रत्यक्षादिप्रमा सिद्ध जो अर्थहै तिससे विरुद्ध अर्थके कहनेवाले वेदांत शास्त्र इदिप्रमाणरूपकर मानतेहैं तौ वोधके ग्रन्थोंमें क्या अपराध है अर्थात् तिनोंकोभी प्रमाणरूप मान्या चाहिये यह तात्पर्य है। ३ शैव प्रधान पाशुपत व्रत है जिन उपासकोंको तिनका नाम शैव पाशुपत है।

औरठौर गयो पुन पेखि मुछकानो अति,
अहो बकध्यान पटऊजल सुहाइहै ॥
गंगनीर धारतट शीतलसिलासवार,
प्रोक्ष प्रोक्ष आप कुश आसन बिछाइहै ॥
लए अक्षमाल मुख मंत्रतो बिसाल जपें,
अंगुलकैमाहिं कुशमुद्रे सुबनाइहै ॥
एही दंभवंत धनवंतनिके वित्त हरें,
बीच मंत्र न्यासकर अंगुली हलाइहै ॥ १६ ॥

सवैया।

हंकार तबै पुन पांइ उठाइ चल्यो मुछकाय पिखेजनआना ॥
है कर माहिं त्रिदंडधरे मुख छूत बकै सुलदे अभिमाना ॥
द्वैत सुनाहि गहै उरमैं पुन नाहि अद्वैतको रंच पछाना ॥
पंथै उभै इह भ्रष्ट भये भनि आश्रम और पिखे मुछकाना १७॥
किहको इह आश्रम पावनहै ढिग द्वारन ऊच सुवंस गडाए ॥
सुमनो तिम ऊपर नाचतहैं सित अंबर पुंज इजार तनाए ॥
इतहै कृष्णा जिन यूप शिला इतते चमसा बहुभाँति सुहाए ॥
इत मूसल और सऊषलहै इत केशरकुंभ सुचीत बनाए॥ १८॥
घृतहोम सुगंध सुधूम बडो तिन श्याम सभोनभमंडलकीनो॥
यह गंगसमीप सुआश्रमहै पिख मोहि सभो श्रम होवत खीनो॥
ग्रहमध्य बडो धरमात्मको तिनको यह आश्रम आहि नबीनो॥
सुभलो यह आश्रम पावनहै दिनदोइसुतीननिवास सुखीनो॥

---

१ रुद्राक्ष माला। २ द्वैताद्वैत उभै। ३ काले मृगकी त्वचा-यूप थंभा-चमसा यज्ञपात्रविशेष।

दोहा।

ऐसे धार हँकार उर, बन्योचहै तिहमाहि ॥
पुरुष निहारयो एक तिह, रूप सुनीजे ताहि ॥ २० ॥

सवैया।

मृंदलांछततां तनु सुंदरहै, पुन भाल विषे घसि चन्दनलाए॥
भुज औ उदरे उर कण्ठ उरू पुन ओठन चन्दनटीक बनाए॥
दृग जानु कपोल सुपीठविषे चिविकेबहुचन्दनटीकसुहाए ॥
कुश चूंडकटे कर काननमैं सुमनो यह दंभइ सोचमकाए २१
सुभले अब याहिसमीप चलों इमधार चले मन सूष घनेरे ॥
ढिगजाइ उठाइ भलेकरको मुख एहुकही कल्याण सुतेरे ॥
पुन दंभ हूँकार कियो मुखते इम वारतहै नहि आउ सुनेरे ॥
इतनेमहि आइगए बटुबालक बामनवाकसुनोतुममेरे॥ २२ ॥
दूरहि ठाढरहो द्विज जू इह आश्रमकी गति तोहि नजानी॥
पादपछालन आप करो घरभीतरऊ जल लेहु सुपानी ॥
तो इमआश्रम पांउधरो इम कोन बरो बटु एहबखानी ॥
क्रोधभयोसुहंकारबड़ो इहभांति सुनी बटुकीजबबानी॥ २३ ॥

हंकार उवाच ॥

सवैया।

हाविधि कौन कुदेशअए जिहदेशन याविध लोक बसैहै ॥
कोविदलोक प्रसिद्ध बडे हमसें जिनदेशन आतिथऐहै ॥

---

१ मृत्तिकाके बिंदुकर चिह्नित है शरीर जिसका। २ शिखा। ३ दम्भका शिष्य। ४ आपणे अनिष्टकरणे विषे तथा परके अनिष्ठ करणे विषे प्रवृत्ति करावणेहारा जो अभिज्वलनरूप अंतःकरणकी वृत्ति विशेष है ताका नाम अहंकार है।

आसन पाद जलं अर्गा तिनके हित नाग्रही पुन लैहैं ॥
नाहिछुहे जल मंडलको हम और सुदेशहि जाइ वसैहैं॥२४॥

कविरुवाच ॥

दोहा ।

करकी सैनी दंभकर, कीनो ताअंस्वास ॥
इह जनावत थिररहो, काहेभये उदास ॥ २५ ॥

सवैया ।

तब बोलमुखोबटु एहकही गुर याविधिते द्विज कीनबखाना॥
भयो तव आगम दूरहिते हम ना कुलशीलसुतोहि पछाना
सुनि यह बात हंकार बली मुखभाषत है उरमें खुनसाना ॥
हमरो कुल शील परीक्षनकैअबलायकमूढ सुतोहिप्रमाना२६

दोहा ।

सुन मूर्ख अबतैं कहों, गौड प्रसिद्ध सुदेश ॥
राढापुरी प्रसिद्धहै, पेखत हरे कलेश ॥ २७ ॥

कबित्त ।

भूरश्रेष्ठनाम पुन ताहिमै प्रसिद्धधाम,
ताहिपति तात मम लोकमैं बखानेहैं ॥
ताहिके जुपूतहैं सुपूतऔ कुलीन बडे,
देशनप्रसिद्ध लोकलोकमाहि जानेहैं ॥
तिनमे विवेक विनय धैर्य[1] अचार शील,
प्रगट उदार मम कोविद प्रमानेहैं ॥

१ धीरज ।

सोई हम आए विधिलोककिधोनएभये,
भयोसु अचंभ जनमोहि न पछानेहैं ॥ २८ ॥

दोहा ।

सुनत बात पुनदंभयह, बटुकी ओरनिहार,
सैननहीं समझाइयो,देहु पादहित वार ॥ २९ ॥

सवैया ।

ताम्रघटी बटुले करमैं पुन उज्जलवारि सुपूर लियायो ॥
ताम्रघटी करले भगवंत करो पदक्षालन एहुअलायो ॥
हंकार कह्यो हम रोंवकरें,जगकाहूंको नाहिबनेसुदुखायो ॥
धोइकिपांउ सुआश्रममें बरनेहिततााहि सुपांउ उठायो॥३०॥
दंभ[1] तबै पुन दंतचबाइ चढ़ाइ भ्रुंए मुख एहु अलाए ॥
दूरहि पांइ गडायरहो द्विजमूढकहाढिग आवत धाए ॥
तेतन स्वेतकी बिंदुसुनो पसरें इतते उत वायुचलाए ॥
ब्रह्मण्य अपूर्व एहु पिखी सुहंकार कह्यो मनमें खुनसाए॥३१॥

दोहा ।

बहुर बटुमुख बोलियो,ब्रह्मण्यइ सोही होहि ॥
उत्तम द्विजयालोकमैं, कबकब पेखे तोहि ॥ ३२ ॥

सवैया ।

भवभारतखंड महीप जिते पदपंकज[2] नाहि छुहें डरपाए ॥
पदकंजसिंहासन भूतलकेढिग आसनभेनिज मोलझुकाए ॥

---

१ दम्भने दन्तोंको दबाय भ्रूको चढाकर बटु बालकके प्रति देखा तब बटुमे अहंकारके प्रति कहा । २ दम्भके चरणकमलको ।

मुकटामणिकी सुमरीचिनकै पद वारजआरती दीपजगाए ॥
इनके ढिगजाइ निंशकसुनो मतिभूलगईद्विज तूं खुनसाए३३॥

दोहा।

सुन हंकारःसुमनविषे, कीनो इहै विचार ॥
मनो सुयाही देशमें, दंभ लयो अवतार ॥ ३४ ॥
भवतु तथा इह आसने, मैं अब करों निवास ॥
उरूनिवावेताहिने, आसनबैठनआस ॥ ३५ ॥
मैवं मैवं बोल बटु, ऊचे कीन प्रकाश ॥
आराधंपाद आसनइहै, और न करे निवास ॥ ३६ ॥

सवैया।

तब बोल हंकार सुएडुकही मनभीतरकोप भयोअतिगाढा ॥
दक्षिणदेश प्रसिद्ध बडो तिह भीतर शुद्धपुरी इकराढा ॥
सुनहोतिनमाहि प्रसिद्धबध्योगुरुके कुलवासकरचोअतिपाढा॥
हमजो नहिं आसन लायकहैं कहु तैंगुरु कौन ब्रह्मांडतेकाढा॥
सुन मूर्ख कान भले धरियो इक और प्रसिद्धकहौंतव बाता॥
द्विजकोविद लोकप्रसिद्धबडेसुबरीतिनकी दुहिताँबिष्याता ॥
कुलउज्जलजानि मरालनकी,तिनके सम नाहिं अहे ममताता
तिसतेःहम लोकनमांहि बडे हमरे सम नाहिं अहे मम ताता३८
मम:ःसालकमित्र सुमातुलकी दुहिता इक और भलीजगगाई॥
तिनकेव्यभिचारकीझूठकथा शठलोकननेजगमाहिं अलाई ॥
तिनके निजमाहिसंबंधपिखे मति ताहिसमे अतिमे खुनसाई॥
निज:नारि मनोगत जीषिणमें सुमूढबटू घर नाहि टिकाई३९

१ रश्मिकरके २ गुरु।३ कन्या। ४ श्यालक (श्याला)।

सुनिके यह बात सुदंभ बली मनभीतरसों अतिसैखुनसाने ॥
द्विज तूं निजऊजलता अपनीजगभीतरयाविधिमोहिबखाने॥
सुन मोहि महात्मलोकनमैं द्विजरायसु तोहि न रंच पछाने॥
कछु आहि अपूर्व उजलता ममभीतर सो चतुराननं जाने॥४०॥
हम एकसमेबिधलोक गए मुनि मो पिख आसनते सुउफाये॥
इह ठौर बसो मुनिबृंद कहें बहु आसन ना हमरे मनभाए ॥
बिधि आप सुगंदकरी मुखते पुन गोगरसोंनिजजानुलिपाए॥
करजोर भलीविधि आदरकै तिनऊपर मोहिबिरंचिबैठाये४१

दोहा।

बहुर हंकार सुबोलिया, दांभिक ब्राह्मणजान ॥
कह विरंच पुन नर कहां, कीनो झूठबखान ॥४२ ॥
अथवा यह द्विजदंभहै, ताहीकीन उचार ॥
ऐसे मने विचारकर, भयो क्रोध हंकार ॥ ४३ ॥

सवैया।

कौन सुरेश्वरको विधिहै, ऋषिकौन सुनो किहते उपजाए ॥
मे तपको फल जानत ना सुन बामन तूं मनमें गरबाए ॥
कोटिसुरेश्वर बिरंचिमुनीपद पंकज मोहि परे हरपाए ॥
रिषिकी उत्पत्तिकीभूमिकही सुपुराननमाहि सुनोमनलाए४४

१ शपथकरी। २ इंद्र अहिल्यागामिहोनेते कछु नहीं तथा ब्रह्मा स्वकन्यागामी होनेते सोभी कछु नहीं। ३ यद्यपि पुराणोंमें ऋषियोंकी जन्मभूमि उक्तरीतिसे कही है। तथापि अहंकारको आसुरी संपत्‌में होनेकर गर्वसे तथा अपनी सामर्थ्यके जनावने अर्थ सर्व ऋषियोंको नीचस्त्रियोंसे जन्मरूप हेतुकर निकृष्टता(न्यूनता)सूचन करीहै ताको सुनके आस्तिकपुरुषने कुतर्क नहींकरना काहेतें,जैसे प्रपंचकी उत्पत्तिसेलेकर प्रलयपर्यन्त इंद्रादि देवता परमेश्वरने संसारमर्यादार्थ स्थापन करेहै तैसें व्यासं वसिष्ठादि-

ऋषिशृंग मृगी कुशकौशिकऔगजनीहस्तामलजूं उपजाए ॥
बारवधू सुबसिष्ठ जए दुहिता पुन झीवरव्यास उपाए ॥
शशिनारिविषेऋषिगोतमजे पुन मांडवमेंडकिते निकसाए ॥
तन्या सुचंडाल पराशर जूरिषिऔर मतंग मतंगनिजाए ४५॥
तब दंभ विलोक अनंद भयो, यह आर्य मोहि पितामहआए॥
नाम हंकार कहें जिनको, इन पेखनते मनमें बिगसाए ॥
आर्य लोभकोमैं सुतहों, मम दंभकहें तव लागतपाए ॥
हंकारधरियो सिर हाथ तबै, सुतदीरघआयुबडेसुखपाए॥४६॥

सवैया ।

द्वापरअंत सुमोहि पिखेतव बालहुते तव अंग मलाने ॥
काल वितीत भयो बहुतो सुत याजगमें हम हैं सुबुढाने ॥
नैनन मंद सुडीठ भई इहिकारणते सुत नाहिं पछाने ॥
आज अनंद भयो पिखते सभ अंगनमो तुम हो चिलकाने ४७॥

–महान्ऋषिभी परमेश्वरने संसारमर्यादार्थ स्थापनकीयेहैं इसीवास्ते अनेक जन्मकर्मों करके लोगोंको अपनेअपने धर्ममें नियुक्तकरेंहैं तथा आपभी आचरण करेहैं परन्तु तिन जन्मकर्मादिकोंकरके आत्मज्ञानका बाध होवैनहीं तथा मोक्षभी अवश्यहोवैहै याअभिप्रायवाला व्यासभगवान्का सूत्रहै तथाचसूत्रम्–(यावदधिकारमवस्थितिराधिकारिकाणां) अर्थ यहः–सृष्टिके आदिकालविषे जगत्व्यवहारके चलावणेवास्ते परमेश्वरने स्थापनकरये जे इंद्रादिदेवता तथा वसिष्ठ भृगु नारदादिक अधिकारी पुरुषहैं तिनअधिकारीपुरुषोंकूं जितनैकालपर्यन्त सोअधिकारहोवैहै तितनैकालपर्यन्त तिनोको स्थिति होवैहै औ मध्यकालविषे किसी वर शापके वशते तिनअधिकारीपुरुषोंकूं जन्मांतरकी प्राप्तिहुएभी आत्मज्ञानका बाधहोवैनहीं तथा ताअधिकारीकी समाप्तकालविषे तिनोंकूं मोक्षभी अवश्य होवैहै इति।इससूत्रप्रमाणसे महान्ऋषियोंका जन्मकर्म संसारमर्यादार्थ होनेतैं अहंकारकृत निकृष्टता (न्यूनता) नहींहै; किंतु,उत्कृष्टता अधिकता है यह तात्पर्यार्थहै ।

तव आहि कुमार सूजूठ बडो कहु आनंदसों जग भीतर सोई॥
तव दम्भ कह्यो इह ठौर बसें बिन ताहि नमेंजग जीवन होई॥
तव मात पिता तृष्णा पुनलोभ कहो सुखसों जगभीतर दोई॥
पुन दम्भ कह्योमहामोहकी आयसु पाइ बसें इह ठौरसुओई४८
आप कहो किह कारणते इह ठौर प्रसाद कियो तुम आए॥
हंकार कह्यो सुत मोह महीपको गोप संदेश सुहै हम ल्याए॥
चाहत ताहि विवेक हते निज कान सुने सभ लोक अलाए॥
ता बिरतांत सुनावनके हित आवनमोहि भयो समुझाए॥४९॥
तब दम्भ कह्यो सुखसंग अए तव पेखनते मम देह सिरानी॥
मोह महीप सुआइ इहाँ सुरलोकहिते जन एहु बखानी॥
मोह महीप शिरोमणि जू शिवकी नगरी सुठई रजधानी॥
सभलोक कहें मुखपंकजमेंमम आपसुनी यह बातसुकानी५०
हंकार कह्यो किहकारणतें बहु लोकपती इह ठौर बसाए॥
दम्भ कह्यो इहि कारण है सुविवेक कहूं जग होन न पाए॥
बोध उदे यह भूमि बनारस वेद पुराण इहै मुखगाए॥
कुलनाशकबोध निवारणको इह ठौर निवाससुमोहिठहराए५१
हंकार डरे सुनि बात इहै शिवके पुर बोध सुकौन मिटाए॥
तिनठौर बसेंसब जीव जितेसुखसों शिव ताहिकेबन्धछुडाए॥

१ तथाचाथर्वणश्रुतिः-मुमूर्षोर्दक्षिणे कर्णे यस्य कस्यापि वा स्वयम्॥ उपदेक्ष्यसि तं मंत्रं स मुक्तो भविता शिव। २ तच्च ज्ञानं भवेत्पुंसां सम्यक्काशीनिषेवणात्। अर्थ यह- -श्रीरामचन्द्रजी कहतेहैं:-हे शिव! जिसकिसी मरणइच्छु पुरुषके कर्णमें स्वयं (आपही) तिस मंत्र(तारक)का उपदेश करोगे सोपुरुष तारकमंत्रोपदेशजन्य ज्ञानद्वारा मुक्त होवैगा। १। ब्रह्मात्म्यैक्यलक्षण जो ज्ञान सो पुरुषोंकों सम्यक् काशीके सेवनसे होवैंगा। २।

अंतसमैं करुणाकरके सभ कानन तारक¹ मंत्र सुनाए ॥
सभ पाप मिटै शिव पेखनतें क्षणभीतरजीवन बोध उपाए६२॥
तबदम्भ कह्यो इहवात सही पर होवतना सभजीव मझारा ॥
तिनको नहिबोधकदाचितहैजिनके उरकाम सुक्रोधविकार

---

१ श्रुतिः । देहान्ते देवस्तारकमुपदिशति स्मृतिरपि- मुमूर्षो मणिकर्ण्यन्तरर्धोदकनिवासिनः ॥ अहं दिशामि ते मंत्रं तारकंब्रह्मसंज्ञकम् ॥ अर्थ यहः-देहान्तकालमेंमहादेवजी तारकमंत्रका उपदेश करतेहैं ॥ तथा महादेवजी कहतेहैंः-हे प्राणी!मणिकर्णिकाके अन्तर अर्ध जलमें निवासकरनेंवालेअर्थात् आधेशरीरको जलमेंरखनेवाले तथा मरणकी इच्छावाले तुमको मैं ब्रह्मसंज्ञक तारकमंत्रकाउपदेश करताहूं इति ॥ इस कहनेकरयह अर्थ सिद्धभया कि काशीमें मरण जन्तु मात्रको साधारणतयामुक्तिका हेतु है यहअहंकारने दम्भके प्रति कहा-तारकमंत्रका अर्थयह हैः-संसारसे भयभीतपुरुषोंको जो तारे (मुक्तकरे) सो तारक मंत्र कहियेहै ।

२ तब दम्भने अहंकारप्रति कहा येवार्तासत्यहै परन्तु भारत औ पुराणमें यह लिखा हैः-श्लोक-यस्य हस्तौ च पादौ च मनश्चैवसुसंयुतम्॥विद्यातपश्च कीर्तिश्चसतीर्थफलमश्नुते॥१ अदाम्भिको निरालंबो लघ्वाहारोजितेंद्रियः॥विमुक्तःसर्वसंगैर्यःसतीर्थफलमश्नुते॥ २ ॥अर्थ यहः- जिसके हाथ तथाचरण निषिद्धक्रियारहितहैं तथा जिसकोतीर्थ माहात्यका ज्ञानहै औ कृच्छ्रचान्द्रायणादि तपसहित है तथानिष्पापकीर्तिवाला है सो तीर्थमहात्म्योक्त फलको प्राप्त होवैहै ॥ १ ॥जो पुरुष दम्भरहितहै तथा आश्रयरहितहै तथा अल्पाहारी है तथाइंद्रियजितहै औ सर्वसंगसैं रहित है सो तीर्थमाहात्म्योक्तफलको प्राप्त होवै है ॥ २ ॥ यद्यपि भारतपुराणमें ऐसे लिखाहै तथपि श्लोक-नाविमुक्तो मृतः कश्चिन्नरकं यातिकिल्बिषी ॥ ममानुग्रहमासाद्य गच्छत्येवपरांगतिम् ॥१॥ वाराणस्यां स्थितो यो वाकामरोषरतः सदा॥योनिंप्रप्यापिपैशाचींवर्षाणामयुतत्रयम् ॥ २॥ पुनस्तत्रैवनिवसञ्ज्ञानं प्राप्नोत्यनुत्तमम् ॥ तेन ज्ञानेन संपन्नो मोक्षं प्राप्नोत्यनुत्तमम् ॥३॥अर्थ यहः-महादेवजी कहतेहैः-अविमुक्तसंज्ञक काशीक्षेत्रमें मराहुआपुरुष पापी भी है तौभी नरकको प्राप्त होवै नहीं किन्तुमेरे अनुग्रहकूं प्राप्तहोयकर परमगति(मोक्ष)को ही प्राप्त होवैहै ॥ १ ॥ तथा जो पुरुष काशीमें स्थितहुआ सदाकामक्रोधादिकोंमेंही प्रीतिवाला है सो पुरुष तीनअयुत ३०००० तीसहजारवर्षपर्यन्त पैशाचयोनिको प्राप्त होयकर ॥२ ॥ पुनः तिसकाशीमें वसताहुआ अनुत्तमज्ञानको प्राप्त होवै है तथा तिसज्ञानकरसम्पन्नहुआअनुत्तममोक्षकोही प्राप्तहोवैहै॥३॥अयुतप्रमाणपैशाचयोनिको प्राप्तहोवैहैयाकाभाव-

जिनकेकर पाद मनो बस है, तपकीरतिसों जगहै उजियारा॥
वहुतीरथको फलपावतहै, यह भारत और पुरान उचारा॥ ५३॥

दोहा।

वेत्रपाणि आए तबै, कंचुक पाग अनूप॥
नागरजन आए सुनो, महामोह जगभूप ॥५४ ॥

सवैया।

चन्दनके छिणकावकरोमणि फाटक हेम सुबेद बनावो ॥
जलयंत्र सभै ग्रहखोलिदिजे तिनभीतर कुंकुमगंध मिलावो ॥
स्तभ द्वारन बन्धनवारकरो गजमोतिनहारलडी लटकावो ॥
शक्र सरासन चित्रधुजासभसौधनकेसिरमाहि झुलावो॥५५॥

कवित्त।

फेर दंभकह्यो महाराज हैसमीप आए,
चलिये अगारी सनमान अति कीजिए ॥
कह्यो है हंकार तुम भलोही उचारकियो,
हूजीए तयार सुउपायन को दीजिए ॥
जाइके उपायन सुपायनके माहि धरी,
जोरकर कह्यो यों बनारस पिखीजिए ॥
आए महामोह भूप पुरीमैं प्रवेशकियो,
विविध विभूति प्रवारसो सुहीजिए ॥५६॥

–यह है:–काशीमें मरेहुए पुरु को भैरवीयातनासैं पापका फल थोडेकालमें भोगाया जावैहैं औ काशीसै बाहरमरे पुरुषकोयमयातनासैं पापका फल चिरकालमें भोगाया जावैहै यह विशेषता है औ(न।विमुक्तोमृतः)इस श्लोकमें(ममानुग्रहमासाद्य)इस पदकरभी ज्ञानप्रदान रूपानुग्रहण है. यातै(ज्ञानादेवतुकैवल्यम्)इत्यादिश्रुतिवोसैंभी विरोध होवै नहीं इति । १ चोला । २ भेट ॥

महामोह भूपसु अनूप पिख हसै अति,
अहोजडबुद्धि सभलोक बौरानेहै ॥
लोक परलोकमाहि भोक्ताअनूपसुख,
देहते विभिन्न मूढआत्मा बखानेहै ॥
आकाश तरुफूल नविसालफलआश,
करैं कहो नभफलहूंको स्वाद किनजानेहै
भयेखोटे पंडितपखंड सुचलाए जग,
बोलसुकपोललोग सगरे ठगानेहै ॥९७ ॥
जोई जग नाहि ताहि वस्तुको सुआहिकहैं,
भयेहै बचालवाक मृषावेद मानई ॥
चारवाकनके वाक सत्य ताहिको असत्यकहैं,
भये मूढलोग ताहि निंदाको बखानई ॥
अहो तत्त्व सारको बिचार तुम आपकरो,
काटे तनशीश दृगवाही ओर ठानई ॥
तनते न्यारो जो पधारे जीवपिखे कोई,
तबी तनु भिन्न यह आत्मसु जानई ॥ ९८ ॥
लोगनिको वंच पुन वंचो निज आतमको,
शीतजलनाइवृत आत्मतपाइ-है ॥
नाक मुख पाद पान देह हैं समान सभ,
मनमै न आइ कर्म वर्णको बताइहै ॥
आपनी पराई नारि संपदा बताई श्रुति,
नाहि हम जाने सठ भेदको अलाइहै

नारि धन भोग पुन पापको विभाग यह,
आपनो परायो बलहीन मुख गाइ है ॥ ५९ ॥
आत्मा शरीर यह धीर चारवाक कहै,
आगम प्रमाण एकताहिको सुलेखिये ॥
भूमि जल तेज वायु तावसो बताइदए,
जाहि मै प्रमाणसु प्रत्यक्ष एकपेखिये ॥
नारिनको भोग और द्रव्यको संयोग जोई,
यही पुरुषार्थ न और कछू देखिये ॥
चेतन सुभूत होई नाहि पर लोक कोई,
मोक्षविनमृत और दूसरो न पेखिये ॥ ६० ॥

कबित्त।

यही मनधारमुख बुद्धने उचारकीयो,
उत्तमसिद्धांत चारवाकको पढायोहै ॥
चारवाक शिष्यनपर शिष्यन पढाइ सभ,
यही सुसिद्धांत लोकभीतर चलायो है ॥
ऐसे सुन चारवाक चारवाकशिष्यलिये,
पेखत समाज राजसभामांहि आयो है ॥
शिष्यको बुलाय समुझाय बात एहुकही,
दडनीति विद्या और कछु गायोहै ॥ ६१ ॥

---

१ पुरुषार्थहीन कहतेहैं। २ अर्थकामौ परमपुरुषार्थौं न धर्मो नापिमोक्षः। अर्थ यह है-धन तथा काम दोनोहि परमपुरुषार्थ हैं चारवाकके मतमें न धर्म है न मोक्ष है। ३ देहपातही मोक्ष है। ४ राजनीतिही बिद्याहै।

शिष्य उवाच।

दोहा।

वेदत्रयी गुरुईशकृत, विद्या कहें उदार ॥
वेदनसों कऱ्यो जजन, पाए स्वरग अपार ॥ ६२ ॥

चारबाक उवाच ।

सवैया।

धू[1]रतको परलाप सुनो यह वेदत्रयीजगमाहि बखानी ॥
याच[2]क यग सद्रव्य विनाशक ए स्वरलोक जिवावत प्रानी ॥
तौ वहु दाह दहे हुमजे फल भूरलहैं वहुरीति समानी ॥
है न कछू सुकपोलकही धनवंचनके हित एह कहानी ॥ ६३ ॥
कृतश्राद्ध इहां मृतजीवनीको पुनजो परलोकविषे तृपताये ॥
जलगंगदए तबही जगमैं कुरुजांगलखेतनको विगसाए ॥
मृ[3]तदीपशिषा बहुतेलदीये बिनपावक सोग्रहमैनिकसाए ॥
कृतबि[4]यो तनकै जगलोगठगेमु नएहुकहे विधिबेदबताए ॥ ६४ ॥

शिष्य उवाच।

सवैया।

गुरुखान सुपान हिप्राणप्रिया सुखसो पुरुषार्थ आपअलाए ॥
इह तौ पुन ती[5]रथकार जिते किहकारण भोगनते डरपाए ॥
जग सूखतजे बनजाइ बसे, तप दीरघसो निजदेहतपाए ॥
जगभोगनत्यागसुयोगभजेसुखहेत इहैविधिआगमगाए ॥ ६५ ॥

---

१ वञ्चकका अनर्थवचनयेवेद तीनो हैं। २ ऋत्विजः-यज्ञ, होमादि-द्रव्य पुरोडाशादि-प्राणि यजमान। ३निर्वाण। ४ बहानेको करके वा वञ्चनप्रकार करके। ५ ग्रन्थकार ॥

चारवाक उवाच॥

सोरठा।

धूरत कीन प्रलाप, आगमनाम सुताधरे॥
आशामोदक थाप, मूर्ख तृप्त सुहोवई॥ ६६॥

सवैया।

दृग दीरघ अंजनशाम खिरंजन नील सरोरुह है विगसाए॥
नवनागरयानवनाग कला अलिकै अलिसीसुकपोलसुहाए॥
कह ताहि अलंगनसे जनमें कह पावक पंच सुदेहतपाए॥
कह विजन भीष अहार कहां उपवासनके सठ देह सुकाए ६७॥

शिष्य उवाच॥

चौपाई।

हे गुरुग्रंथकार हैं जेते। ऐसे वचन बखानें तेते॥
दुःखविमिश्रित सुख संसारा। ताते ताको करो प्रहारा॥६८॥

कविरुवाच॥

दोहा।

सुनत शिष्यकी बातको, हसे सुबालक जान॥
चारवाक पुन युक्तिसों, आगे करे बखान॥ ६९॥

चारवाक उवाच॥

सवैया।

दुःखसंग मिले जगके सुख जेवहि दूर तजो इहभांति बखाने॥
ते निरबुद्धि महापशु हैं हम जीवन के परतारक जाने॥
सितंतंदुल जे, तुखसंग मिले तिह नाहि तजे जन जें सुज्ञाने॥
इहभाँति लोकायत वाकसुने महामोहबली मनमें विगसाने ७०

१ वञ्चक। २ श्वेत। ३ देवज्ञानी।

महामोह उवाच स्वपत्नी प्रति।

सवैया।

माननि काननमाहि सुनो यह वाक प्रमाण महासुखदाई।
माहि निदाघ[1] मनो बरषा तिमकाननको सुख शीतलताई॥
सानंद ताहि विलोकनकै नृपमोह बली इह बात अलाई॥
आहि लोकायत सज्जनमें इन वाकनकै उरमें हरषाई॥ ७१॥

दोहा।

तिह औसर आयो तबै, चारवाक प्रधान॥
पेखि समीप सुजाइकै, कीनो एहु बखान॥ ७२॥

चारवाक[2] उवाच॥

चौपाई।

जयजय महाराजजगकारण। तुम त्रिभुवनके हो प्रतिपारण॥
चारवाकपद करे प्रणाम। सेवक सदा पछानो नाम॥ ७३॥

महामोह उवाच।

चौपाई।

चारवाक सुखसों तुम आए। बहुत कालकै दरशन पाए॥
सतयुग त्रेता भयेबितीत। तुमरी सारन पाई मीत॥ ७४॥
द्वापर अंतभई कछु सारे। कीटभदेस वसतहैं प्यारे॥
बैठो इहाँ समीप हमारे। समाचार कछु करो उचारे॥ ७५॥

---

१ ग्रीष्मऋतुमें। २ पृथ्वी, अप, तेज वायु इन चारोंको जों माने तिसकानाम चारवाकहै॥

चारवाक उवाच ।

चौंपाई ।

समाचार सुनिए सभदेव। प्रभुकोउ निखिल बतावो भेव ॥
पश्चिम देश बसे सुखधाम । साष्टांग कलि कीन प्रणाम॥७६॥

महामोह उवाच ।

चौपाई ।

चारवाक मम करो बखाना । सबविधि है कलिको कल्याना ॥
मम प्रतापमै अति अनुरागी ।कलियुगहैंजगमें बड़भागी ७७॥

चारवाक उवाच ॥

चौपाई ।

तव प्रसाद सबविध कल्याना । तेजवंत जैसे भगवाना ॥
कीनेकाज करन नहिं रहे। तव पदमूल दरसको चहै ॥७८ ॥
तुमरे वाक सु सिरपर धारे । दुष्टनके तिनमूल उखारे ॥
तुम प्रसादमुदित अतिभयो । दरसनसुंदर अतिहरषयो ॥७९॥

दोहा ।

धन्य कलि तव दासहै, करे तुमारे काज ॥
तव पद पंकज वंदना, करे जगतके राज ॥ ८० ॥

महामोह उवाच ।

दोहा।

चारवाक अतिमित्र मम, मोको करो उचार ॥
कौन कौन कार्यकरे, कलियुग जगतमझार ॥ ८१ ॥

१ दोपाद । दोजानु । दोहस्त । हृदय । शिर ॥

चारवाक उवाच।

सवैया।

वेदनके पथदूर तजे सुयथेष्ट चेष्टमैं नरपागे ॥
आज वैरागकी कौन कथा त्रिणलोष्ठ कंचनसैं जनलागे ॥
ना कालिना हम कारणहैं, प्रभुके प्रताप भये बडभागे ॥
जो धवंत महंत महाजन तेरतिनाहकि पांउ परागे ॥
दिशिउत्तर औ पुनपश्चिममैं यह बेदत्रई कलि दूर निवारी ॥
दिशि दक्षिण पर्व वेदत्रयी तनपालनकेहित हैं द्विजधारी ॥
सम औ दमकी तह कौनकथा जिह देवसमान भई ग्रहनारी ॥
अबकाज संपूर्ण सिद्धभये, सुविवेकहिकी जड मूलउपारी ८३॥

चौपाई।

अग्निहोत्र पुन बेद विसाला। औरत्रिदंड भसम पुनभाला ॥
वलमतिहीनजीवकाकारण। धरे बृहस्पतिकीनउचारण॥८४॥
जीवनहित जन बेदबिचारे। तातें कारज भये हमारे ॥
कुरुक्षेत्रादि तीरथ के माही। प्रबोध उदे स्वप्नेंहु नाही॥ ८५॥

महामोह उवाच।

चौपाई।

चारवाक कलिमहा प्रबीन। मम हित भुजबल धरे नवीन ॥
ताभुजदंडकाज मम सरे। तीरथबडे व्यर्थ तिनकरे॥८६॥
अब मोको निह चिताभई। तीरथबोध संक उर गई ॥
ग्रहमहि नारि सुतनके संगा। कहाहोइ तह बोधप्रसंगा॥८७॥

---

१ परस्त्रीगमन मद्यपानादिरूप अविहितचेष्टामें नर प्राप्तहैं। २ मृतका पिण्ड। ३ मन काय। वाणिरूप ॥

चारवाक उवाच ।

दोहा ।

तव पदपंकजकोलिखी, कलियुग पातीआप ॥
याको आप बचाइये, राजन रविप्रताप ॥ ८८ ॥

चौपाई ।

याविधिसुन्योभूपति जबही । पातीलगो बचावन तबही ॥
वाचक कहे सुनो जगभूपा।कलियुगपाती लिखी अनूपा ८९

कलियुग उवाच ।

दोहा ।

तव बसकीनो निखलजग, सुरनरमुनीमहान ॥
कलियुग पद बन्दनकरे, महामोह भगवान ॥ ९० ॥
समाचार सभदेशको, सुनो जगतसिरताज ॥
तव प्रताप तव दासजग, एहु करे सभकाज ॥ ९१ ॥

छप्पयछंन्द ।

जग तजेनमायामोहनाम अतीत कहावैं ॥
घरमैं लेहिकुसीद भीष पुन मागन जावैं ॥
रैनकरैं रसभोग दिनै तन भसमलगावैं
आपकरैं सभपाप और को धर्म बतावैं ॥
इहभांति अतीतसुमै करे नखशिषलौअभिमानअति-
उरनिसवासर दमडाचहैं कबहूंन होवै रामरति ॥९२॥
हरिकोपंथसुदूर पंथ, बहु आपचलावैं ॥

१ न्याज ॥

रही फकीरी दूर मांगपुर पेटअघावैं ॥
कह इकंत बनबास संगबहु दुंदभवावैं ॥
सवैं निरंतर रातिदिने पुन ध्यानलगावैं ॥
पुनधनमद मसीमलानमुख भूपसौध पुरपौलपर ॥
धनलिपसों व्याकुलमहा शरमापतिसभरहेपर ॥ ९३ ॥
नीतिनिपुण नहिभूपन्याय मन उक्तविचारैं ॥
निजप्रजापर दंडकाज भवभीतर सारैं ॥
राजधर्मकी स्मृतिभूप न नैन निहारैं ॥
पानाशक्त निरंतरधर्म न चीत सुधारैं ॥
जग प्राबंडवाक पुराणबिन, बैठन्यायभूपतिकरैं ॥
राजाधिराजमहामोह प्रभुभद्र सदापश्चमधरैं ॥ ९४ ॥
भयो उपद्रव एक सुनो नीके मनलाई ॥
बहुनाम नारायणमांहि प्रतीत सुजनकोआई ॥
कहूंकहूं मनलाइ महाजन प्रेमलगाई ॥
प्रातिभजें हरिनाम नैनते नीद मिटाई ॥
यह हरिभक्त सुबीज प्रभुजनखोटे उरपरधरैं ॥
यहभूपआवाचनकहिसकोंतबमूलगुप्तक्रितनंकरैं ॥ ९५ ॥
चारवाकसभ और बातप्रभु मुखो बखाने ॥
महाराज नहिंजूठगहैं उरसत्य पछाने ॥
एक पापिनी नारि भई बहु मंत्र सुजाने ॥
यह नाम नारायण दुष्ट ताहिके संग मिलाने ॥

१ दुंदभीवाजा ॥ २ श्याही ॥ ३ देहली ॥ ४ ५ पुराण कहिये पुरातन तथा न्यायके वेत्ता जो प्राड्विवाक कहिये वकीलहैं । बिना राजे बैठकर न्यायकरतेहैं यह भावहै ॥ ६ नाश ॥

प्रभुअपराधनीतें डरें महायोगिनी प्रबलअति ॥
जगचारवाकके वचन सुनि, करोउपाय सु यथामति ९६

महामोह उवाच ॥

छप्पयछन्द।

अब कलिकी मतिबौरानी यों हम जानिओ ॥
लघु नाम नारायणमात्र जिन डरमानिओ ॥
इह राजसूयकोकरणो याजग भानिओ ॥
अश्वमेध मख मौलकऱ्यो जगहानिओ ॥
इह ब्रह्महत्या मातबध परपतिनी गुरुदाररति ॥
अबकरैंनिडरजगमांहिजनडरनाम नाराणयभयोकत ॥

कुबुद्धिमांत्रिरुवाच ॥

छप्पय।

नाम नारायण महादुष्ट भूपति जगगायो ॥
अजामेल इकबार लयो तिन बंध मिटायो ॥
गनिकातें पददासीतां मनतें मतलायो ॥
नामदुष्ट तिह मिल्यो सुतिह वैकुंठ पठायो ॥
सुगजपति व्याकुल बारइक नाम नारायण लयो जब ॥
राजाधिराजमहामोह प्रभुताहिछडायोविष्णुतब॥९८॥

महामोह उवाच।

नाम कुबुद्धि तेरो बडो सुबुद्धि पछाने ॥
जननी नाम कुबुद्धि धरयो मृतते डरमाने ॥
ते यह निखल सुवचनमोहि प्रति सत्यबखाने ॥
नाम नारायण नीच चहै जगमेरोहाने ॥

१ गाकी मदानहै ॥

अबताहि बिनासनहेत कछु होइ उपाय सुप्रगटकरि॥
कुत्संत विपारप्रभुनिखलजन पठोभजेंकहनामहरि९९
धनी धर्म धन दान न रंचक मनमैं आने ॥
निरधन भजे न नाम दानहित उद्यम ठाने ॥
धार फकीरीभेस मूढ़ कृतारथ माने ॥
बिनुसंतोष श्वानवृत्ति आप उत्तमकर जाने ॥
इह तरुणअवस्थामाहि जनतजे बिषे सुउपरति अति॥
पुनि उभैभ्रष्ट जरठापने धनसुतदारा विषेरति ॥१००॥

कविरुवाच ॥

दोहा।

याअवसर इकआइयो, पत्रहस्त नरआन ॥
महामोहभूपालको, जयजयकीन बखान ॥ १०१॥
उत्तर दिशाते आइयो, अनाचार प्रतिहार ॥
यह प्रभुपत्रपठाइयो, लीजे आपबिचार ॥ १०२॥
सुनकर पत्र सुपठनहित, प्रेरयोताहि सुआन॥
बहुपातीपठनंलगो, सुनो प्रभु देकान॥ १०३ ॥

अनाचार उवाच ॥

छप्पय छन्द।

उत्तरके सभ लोक करे, मैशिलापरायण ॥
समुझे ईशनतत्त्वबकैं, मुखसैल नारायण ॥
नारिधर्मतेहीनभई बहुधा गिरडाइण ॥
कहांधरमकीकथारसें, व्यभिचार रसाइण ॥

१ चोटा ॥ २ अनाचारसूबेका दूत ॥

प्रभुइत उत्तरदेशते, अनाचार बन्दनकरें ॥
यम अचौरता विनाप्रभु, भद्र सदामनमें धरें ॥ १०४ ॥

चारवाक उवाच ॥

चौपाई।

और सुएक बेनती अहे। चारवाक संकत नहिकहे ॥
तुम भवपतिसबके सिरदारा। तुमरेरचे निखल संसारा॥१०५॥

महामोह उवाच ॥

कौनबेनती नहींसंकावो। चारवाक तुम प्रगट सुनावो॥
तुम मेरेअतिसै हितकारी। तुमको कहाभयो डर भारी१०६

चारवाक उवाच।

चौपाई।

विष्णुभक्ति नाम इकहैये। महाप्रभाव योगिनी पैये।
कलियुगविरणप्रचारसुकीनी। तदपि अहै वलबुद्धि प्रवीनी१०७
ताऽनुग्रह नर वंस उदारे। हमसंकीटनासकेनिहारे ॥
देव सदा रहीयो सवधाना। विष्णुभक्तिहै येबलवाना॥१०८
एकवार जहँ पाद टिकावे। मरे न मूलन बहुरपलावे ॥
ताहि विराग तहां सुविवेका। सनेसने दिढबाँधे टेका॥१०९॥

कविरुवाच।

महामोह यह सुनियो जबही। अतिभय भयो सुमनमै तबही॥
मनहीमै यह गटीसुहोई। महाप्रभाव योगिनी सोई ॥११०॥

---

१ तिसविष्णुभक्तिकर अनुग्रीतहै वंश जिसका ऐसैं उदारपुरुषको हमारेंजैसेकीट देखिनहींसक्ते तौ साक्षात्‌विष्णुभक्तिकेभक्तको देखनातौ दूरहै यह भावहै ॥

दोहा।

सदा द्वेष हमसों करे, मारी मरेन सोइ ॥
सनेसने हमको हने, महापापिनी जोइ ॥ १११ ॥

दोहा।

महामोह यों मन डरचो, प्रगट कहे कछु और ॥
गुलाबसिंह योंहीभने, मान तजे सिरमौर ॥ ११२ ॥

महामोह उवाच।

कवित्त।

कहां भई संक सुनिसंक चारवाककहो
कामक्रोधआदिबीर ताहिको निवारहैं ॥
कामके भयेविकार भक्तिको बिचार कहां
होइगीनउदेकहूं बेदयों उचारहैं ॥
बैरीहोइ छोटोतौ मोटोकर जाने बुद्धि-
जामत बबूलकोसुमूलते उषारहैं ॥
जीवनकेहेत बलबुद्धिके निकेतजेई
भूपति सचेतसु उपाइको बिचारहैं ॥ ११३ ॥

दोहा।

लघुअरिअवसर पाइके, दुःखदाइक अवनीस ॥
अहि१कंटक पगमै गडे, पीडादे नखसीस ॥ ११४ ॥

१ सर्पकाकांटा ॥

कवि उवाच ॥

चौपाई।

महामोह तब ऊँच पुकारा। है रे को मम भवन द्वारा ॥
द्वारपाल इतने चलि आया। आज्ञाकरो देव जगराया ११५॥

महामोह उवाच ॥

चौपाई॥

काम क्रोध लोभ मद मतसर। सूर नहीं जिनके को समसर ॥
तिनको आयसु यों ममदीजे। विष्णुभक्तिको हिंसनकीजे ११६
द्वारपाल तब शीश निवाए। ज्योंप्रभुकहो करो तिमजाए ॥
इमकहि द्वारपाल जबगयो। पत्रहस्त नर आवत भयो॥ ११७॥

पत्रीहार उवाच ॥

चौपाई।

उतकल[1] देशहिते हम आए। प्रभुपदपंकज पास पठाए ॥
तहपुरुषोत्तम[2]को अस्थाना। सागरतट जँहहै मदमाना ११८॥
यहहै बनारस जह जगराया। जाकोकुल बहु भांति सुहाया ॥
कीन प्रवेशन लाइ सबेरा। दूरहिते तिन भूपति हेरा ॥ ११९॥
यह भूपति कछु मंत्र बिचारे। चारवाकसो बैठ किनारे ॥
चलों समीप सुपत्र दिखाऊं। कारज बेग नबेर लगाऊं॥ १२०॥
गयो समीपसुपत्र दिखायो। जयजय शब्द सुमुखो अलायो ॥
मदमानपद चंद चकोरे। पत्रलिख्यो पढियोप्रभुमोरे १२१
सुनिकर मोहभयोनिजलीनो[3]। है कछु दुःकर भयो मलीना॥
चारवाकप्रति एहु अलाई। अब नंहिबने सुबेर लगाई॥ १२२॥

१ उडीभादेश ॥ २ जगन्नाथस्वामी ॥ ३ अपनेंस्वरूपमेमूर्छांसा होयगया।

जातै कारजहोइ नहानी। चारवाक रहियो सबधानी ॥
चारवाकमुख तथा अलाई। गयो बेग भूपति सिरनाई १२३॥

दोहा।

महामोह तब पत्रको, बैठ पढावे आप॥
गुलाबसिंह याजगतमैं, जिहछायो प्रताप॥१२४॥

मदमान उवाच।

छपप्यछन्द।

स्वस्ति बनारसधाम विषे पदपंकज सुहाए॥
जीत सदा ब्रह्मंडपरे सुरनरमुनिपाए॥
सदाऽधीन धनवंत द्वेषिगनबनहिपठाए॥
अडिग सिंहासनवैठ शीसपर छत्र फिराए॥
राजाधिराज महमोहपद मदमान बंदनकरैं॥
प्रभु इत पुरुषोत्तम आयतनभद्र सदामनमेंधरैं॥१२५॥
और बेनती नाथ सुनो नीके मनलाई॥
श्रद्धामातसमेत शांतिदूति सुबुलाई॥
दयोविवेक सुमान श्रुतिके पासपठाई॥
ज्योंत्योंकरो संबोध मोहि सँगदेहु मिलाई॥
प्रभु वहदिनरैन संबोधकर जिह किहबिधिढिगआनहै
बल इतपुरुषोत्तमआयतनपत्रपठे मदमानहै॥ १२६॥
और कहैं विरतांत नाथ नीके मनधारो॥
काम सहित जो धरमकहूं कहिहोतन्यारो॥
विराग विवेक सुगूढ मनो कछु मंत्र दृढायो॥
कहूंकहूं हरिहेतहोत हमहूं लखपायो॥

१ बुलायकर॥

यामैप्रमाण प्रभु आपतुम जानेभले मनमाहिधरो
प्रभु जिहबिध मिटे अरातिगन सोउपायशीघरकरो १२७

महामोह उवाच ॥

छप्पय छन्द।

महामूढ बहुभये शांतिते जिन डरकीनो ॥
कहांहोइगी शांतिभयोजग कार्यलीनो ॥
ब्रह्मा निसदिन करे पुनः पुनः जगतनवीनो ॥
दक्षमखविनाशक शंभु रहे गोरी सुखभीनो ॥
कमलांकपोल मकरीलिखतउर हरिपयोनिधिशैनकर ॥
पुन और जगतके जीवमैंशांतिकहाकहहोइडर ॥ १२८ ॥

महामोह उवाच पुरुष प्रति ॥

सवैया।

जालम जाह सिताब अबै ममकामको एहु संदेसह दीजे ॥
धर्मबिहीनभयो हमसों इनको क्षणनाहि बिसाहु सुकीजे ॥
जिहभांति भजेन मतो हरिको तिमयाहि भलेदृढबंधगहीजे ॥
मूल इहे दृढ याहि गहो बस याहि भये नकछू मम छीजे १२९

दोहा।

भूपमौलमणि जो कहो, देवकरों बहु जाइ ॥
ऐसै पुरुषबखानकै, गयो बेग सिरनाइ ॥ १३० ॥

---

१ अर्थयहः-अन्तःकरणमेंमहामोह तथाधर्मदोनोरहतेहैं याते धर्मकी निष्कामताके- ज्ञानमें आपप्रमाणहो अर्थात् आपजानतेहो ॥ २ लक्ष्मीके कपोलकहिये गण्डस्थलमें मकरीकहिये मत्स्यकी आकृतिकीन्याई पत्रलेखा रेखा कार चिह्नतहै उरस्थलजिसको ऐसाजोहरि। ३ दूत विनाविचारसे कार्यकरनेवालेका नामजालमहै।

चौपाई।

महामोह पुन चिंतनकरहै। कौनउपाय शांति जगमरहै॥
अथवा और उपाइन कैये। असंतनसंग सुबोलमंगैयै॥१३१॥
क्रोधलोभलो मम भट जेते। बेगबुलयै सगले तेते॥
जिम प्रभुकहें बने तिमकयो। ऐसेभाष पुरुष इक गयो॥१३२॥

दोहा।

क्रोधलोभ दोनों तबै, आए सभामझार॥
गुलाबसिंहनृपबंद पद,लागेकरन उचार॥१३३॥

क्रोधउवाच।

सवैया।

प्रभु मोहिसुनीयहबात कहें,तुम्हरे सँगशांति विरोधकमाए॥
श्रधा हरिकी पुन भक्ति तथा, तिनकी यहदोनभई सुसहाए॥
ममजीवत शांतिकी बाति कहां, यहचाहतीतीनहुप्राणगवाँए॥
भुजकोबल नाथ कहांकहिये,कछुभाषतहो सुसुनो मनलाए॥
अंधकरों दृगवंतनको श्रुतिवंतनकोबधरोंकरडरों॥
धृतवंतनकोंसुअधीरकरों,पुन चातरकी मति दूर निवारों॥
हितकार्य नाहिपिखे कबही, जिनके उर भीतरमै पगधारों॥
हितआत्मको नसुने कबहीपढयो,जितनो क्षणमाहि बिसारो॥

लोभ उवाच॥

सवैया।

जिनके सिरऊपर हाथ धरों तिनकी सुदशा सुन मीत बतावैं॥
सुमनोरथकी सरिता परकूलहि नाहि कदाचित तेनर पावैं॥

तिनके उर अंतर शांति कहां, नरजोधनको दिनरैनहिध्यावै॥
अब क्रोधसखेसुनिये सुकहों, जिह भांतिनतेधनमैंमनलावै॥
इह मत्तगयंद सुझूलतहैं मम एहु तुरंगम भोन सुहाए ॥
लिखपत्र सुभूपतिमोहिदयो, धनल्यावोंऔर बंगालहिजाए ॥
इहगांउदयेकछुऔरकहे नरजे इह भांति सुचीतचध्याए ॥
तिनके उरशांतिकीकौनकथा, इमचिंततही जगमाहिबुढाए ॥

क्रोध उवाच ॥

मोहि प्रभाव सुमीत सुनोममसंगहते जन एहुकमाए ॥
तुष्टाद्विजपूत हने मघवा शिव शीश विरंचिकेकाटबगाए ॥
बाहजमारसुश्रोणतमैंभृगुनंदनआपभलीबिधनाए ॥
सुवसिष्ट मुनीश्वरके सुतजे मुनिकौशिकके आपसुताहिंहताए ॥

दोहा।

विद्याकीरतिवंत पुन, सदाचार दातार॥
मेपदके प्रताप नर, क्षणमैं भजे विकार ॥ १३९ ॥

लोभ उवाच ॥

चौपाई।

तृश्ने आउ बेग इतओरा । मेरो बैन सुनो श्रुतभोरा ॥
तृश्नाबैठ समीप उचारे। आज्ञा करो सुप्राणप्यारे ॥ १४० ॥
लोभ कहे सुन प्राणप्यारी । क्षेत्रग्राम पुन नगर उदारी ॥
पुर अरु दीप भूमिको चहे। आशापाश जिनके मनगहे १४१
तिनपर कृपासु ऐसी करियो । ब्रह्मांडलाषनहतामन भरियो॥
तृष्णे जांउर चरन टिकेहैं। शांतिकहाजगतेनर पैहैं ॥ १४२ ॥

१ वार्ता । २ वृत्रासुर । ३ विश्वामित्र । येसबगाथालोकमें प्रसिद्धहैं।

तृष्णोवाच ॥

दोहा।

आर्य्यसुतमै अरपहीं, सदाचहों सभभौन ॥
अबआयुसु तुमरीभई, मम तृप्तावै कौन॥१४३॥
ब्रह्मांडकोटको पाइ नरमें उर संगति होइ ॥
मेरो उदर नपूरई, तामहि शांति नकोइ ॥ १४४ ॥

क्रोध उवाच।

चौपाई।

हिंसेआउ तूंइत मम ओरा। भाषत बैन सुनो तुम मोरा ॥
इतनेमे हिंसा ढिग आई। आर्य्यसुत मम देहु बताई १४५ ॥
तूंमम धर्मचारणीनार। यहतव संगतिको उपकार ॥
मातपितादिक बंधहै जोई। करें सुषन डरें नहिकोई॥१४६ ॥

सवैया।

कौन पिसाचनी मात अहे पुन कौन सुमकंड तात हमारे ॥
भ्रातसभे ममकीट समा, अब बाधव पुंज बने सभमारे ॥
जातें जये खलहै सभही, इमबोलतहैं जनकीस पुकारे ॥
मीज दोऊकर क्रोधबली, कविसिंहगुलाबसुएहुउचारे॥१४७॥

नराज छन्द।

सुगर्भलौंइनेकुलं समस्तआज मारहों ॥
युवासुबाल बृद्धलौं,नएकको उआरहों॥

---

१ मेरे वचनके करनेवाली। २ तेरे संगतिसे जीवको यह उपकार होनाचाहिये। ३ मकडनाम पक्षवालेजीवविशेषकाहै तथापिशाचकाहै तथा पाखंडीकाहै तथा कंजर (वेश्यासबन्धी पुरुष)काहै यह प्रसंगसें जान लेना। ४ जितनेउत्पन्नभयेहैं।

समस्तभूमिके विषे नयाहिकोठराइहै ॥
सुक्रोधज्वाल नैनकी, विरामतो सुपाइहै ॥१४८॥

कविरुवाच ॥

दोहा।

हिंसा तृष्णा क्रोध पुन, लोभ मिले यह चार ॥
जाइ समीप सुमोहके, जयजय कीन उचार ॥१४९॥

महामोह उवाच ॥

दोहा।

श्रद्धापुत्रि शांतिहै, हमसंग वैरकमाइ ॥
तुम तिह ल्यावो बांधिकै, आयसु मेरी पाइ ॥१५०॥
श्रद्धापुत्रीबंधहित, गए मान नृप बैन ॥
गुलाबसिंह साचीकहे, भयो अखाडेचैन ॥ १५१॥

चौपाई।

महामोह पुन कीन बिचारी। श्रद्धापुत्री शांति बिचारी ॥
तानिग्रहको और उपाइ। सोमेरे उर भास्यो आइ ॥१५२॥
शांतिमातश्रद्धाहै जोई। रहेपरतंतर[1] सदा सुसोई ॥
उपनिषतविषे श्रद्धा नरजेती। प्रथम हटैयेसगली तेती॥१५३॥
मातवियुक्त जबै बहु होई। मरे शांति क्षणभीतर सोई ॥
श्रद्धाबेग हटावनकाज। मिथ्यादृष्टि बुलैये आज॥१५४॥
इतउत भूपति दृष्टिपसारी। विभ्रमवती सुताहिनिहारी ॥
विभ्रमवती प्यारी जैये। मिथ्यादृष्टिसुबोललिऐये१५५॥

---

१ पराधीन ॥

विभ्रमवत्युवाच ॥

देवकरी जो आयसु मोको । मिथ्यादृष्टिमिलावों तोको ॥
इमकहि त्याग आखाडोगई।मिथ्यादृष्टिसहित पुनअई १५६ ॥

अथप्रश्नउत्तर मिथ्यादृष्टीविभ्रमवतीका ॥

मिथ्यादृष्टिरुवाच ॥

चौपाई।

पेषेबहुदिनभये बितीत । निकटिजात लाजत मम चीत ॥
महाराज उपलंभनकरे । ताते चीत सखी ममडरे ॥ १५७ ॥

विभ्रमावत्युवाच ॥

सखी तोहिमुखकंज निहारे । तोभूपति निज आप सँभारे ॥
तूं वाको है अतिसै प्यारी । ताते डरो चीत मझारी॥१५८॥

मिथ्यादृष्टिरुवाच ॥

सखी अलीक सुभाग हमारा । काहेको तैं बहुत उचारा ॥
भूपति मोमै चीत नधरई। तूं ममकाहि वडंबन करई १५९॥

विभ्रमावत्युवाच ॥

सखी अलीक सुभाग हमारे । अबही तूं निजनैन निहारे ॥
तेरो तनु जब भूप निहारे । तोमै रमैं न और चितारे १६०॥
और सखी इक बाति उचारों। घूमतनैनसु तोहि निहारों ॥
कारणकौन न निद्रा कीनी । घूमतनैन सखी रसभीनी॥१६१॥

मिथ्यादृष्टिरुवाच ॥

एकपतीकी जो बहुप्यारी । तिनके नींद न नैनमझारी ॥
मोको सगललोक जग गहें। नीद नैन मम किहविधिलहें १६२

विभ्रमवत्युवाच ॥

दोहा।

सखी प्यारी लोक बहु, मोकों करो उचार॥
जे तोकों निशिदिन भजे, जासो करें प्यार॥ १६३॥

मिथ्यादृष्टिरुवाच ॥

चौपाई।

सखी मोह मम नाह पछानो। काम क्रोध लोभ पुनजानो॥
अथवा सुनो तत्त्वनिजसार।एकएक कहि करों उचार १६४॥
याकुलभीतर जेनृप जाए। मोहिविषे सगले मन लाए॥
बालक बृद्ध युवा पुनिजेई। मोबिन रहे न निशिदिन तेई १६५

कविरुवाच ॥

दोहा।

काम क्रोध पुनि लोभ यह, गुलाबसिंह मदमान॥
तनमै अत्मदृष्टि[1] बिन,होत नहीं पहिचान॥ १६६॥

विभ्रमवत्युवाच ॥

चौपाई।

कामहिकी रति परमप्यारी। हिंसा क्रोधकी सुनी सुनारी॥
तृष्णा लोभहिकी जग गेहै। याविधनारिसुऔरबतैहै॥१६७॥

दोहा।

तूंसभके पतिसो रमहि, इहै बतावो मोहि॥
तेचुपकी क्यों होइरही, करे न ईर्षा तोहि॥ १६८॥

१ शरीरमें आत्मबुद्धि बिना इनकी प्रतीति होवे नहीं किंतु शरीरमें आत्मबुद्धिसे ही इनकी प्रतीति होवैहै।

मिथ्यादृष्टिरुवाच ॥

चौपाई ।

कैसे सखी ईर्षा करई । मोहि बिन प्राणनते क्षण धरई ॥
रति हिंसा तृष्णालौं जेती। मेरो भलो मनावैं तेती ॥ १६९ ॥

कविरुवाच ॥

दोहा ।

मिथ्यादृष्टि[1] सुमरे जब, गुलाब सिंह इम जान ॥
हिंसा तृष्णा आदिलै, होइ सगल पुन हान ॥ १७० ॥

विभ्रमवतीत्युवाच ॥

चौपाई ।

याहिते सखी मोहि बखानी । तोसम सुभग न दूसरी रानी ॥
तोहि सुभाग जबै वहु लहे । तेगतिरूपप्रसादहिचहे ॥ १७१ ॥

सवैया ।

सखि औरकहों निशिनींदबिना जुगनैनसरोजसुतेंअकुलाए ॥
युगनूपुरकी धुनि चीतहरे परभूमिबिषे पदते खिसलाए ॥
गजगामनि तूं गति मंद चले उर चाहतहैंनिजनाह रिझाए ।
इह लक्षण जो:तवनाहपिखे डरहों उर संककरेखुनसाए १७२ ॥

मिथ्यादृष्टिरुवाच ॥

सवैया ।

सखि काहेतेंसकभई तुमको हम नाहिकीआयसमेंसुखपाए ॥
इक और कहोंसुनमोहिअलीजिहतेसगलोडरतोहिमिटाए ॥

१ मिथ्या जो देहइंद्रियां अन्तःकरण इनमें जों दृष्टि कहिये इनमें जो आत्माका तादात्म्याभिमान मरे कहिये निवृत्तहोवैं जब तब। २ स्वस्थानसे भ्रष्टहोतेहैं ।

युवती मुख चंद निहारतहीं नरचित्तचकोर महा हरषाए ॥
दृगकंज फिराइ पिखे युवती कहितां गतिजो नरताखुनसाए॥

दोहा।

इम भाषत दोनों चली, आवत मोह निहार ॥
देवी मिथ्यादृष्टियहि, ऐसे कीन उचार ॥ १७४ ॥

सवैया।

कदलीसमजंघ बिरंचि रची, पुनफूलनमाल सुकंठसुहाए ॥
कर चंचलचीर उभारत है[1], कुचमंडल चन्दन लेपलगाए ॥
जनु नीलसरोज बनी अँखियाँ, पिख दीर्घमें मनकोतृप्ताए ॥
कर डोलत कंकण बोलतहैं, धुनि नूपुरकामसिखीहरषाए १७५
मुख चन्दसरोज मनो अँखियाँ दुतिदाडमदंतनहेर लजाई ॥
जग कामनिदाघ[2]तपे जन जे दृगसिंचसुधातिनताप मिटाई ॥
नभचन्द कलाजन भूमिआई इन पेखनते मनमें बिगसाई ॥
सुगुलाबपिखेमधुमूरतिसी मलमूत्रता नहिदेत दिखाई॥ १७६॥

विभ्रमवत्युवाच ॥

दोहा।

यहमहामोह सुप्राणपति, तूं अति प्यारी नारि॥
चलो समीप प्रसन्नकर, भाष्यो मान हमार॥ १७७ ॥
सुनिकै मिथ्यादृष्टितब, जाइ समीप निहार ॥
महामोह महाराजप्रति, जयजय कीनउचार॥ १७८ ॥

१ उठावतीहै। २ ग्रीष्मऋतु।

महामोह उवाच ॥

दोहा ।

पीनउरू कुच अंकमिल, कीजे मोहि निहाल ॥
हरणाक्षि शिंवशिवाकी, शोभा हरो बिसाल ॥१७९॥
हसी सुमिथ्यादृष्टि तब, मिली सुभुजा पसार ॥
महामोह सुखताहिको, निजमुखकरे उचार ॥१८० ॥
अहोप्यारी संग तव, लयो रसायन सार ॥
जराइकाग्रमेटि पुन, यौवन भयो उदार ॥१८१॥

सवैया ।

पूर्वजो नव जोवनमें, सुमनोजविकार भयो बलकारी ॥
चीत मत्थेउर आनंदथे सभ औरपदार्थ थे सुखकारी
चीत इकागर ताजरठापनते मुखचन्दअमी सुनिवारी ॥
संगमते नवजोवनमें, अब फेर भयो तव प्रेम उदारी ॥१८२ ॥

कविरुवाच ॥

दोहा ।

तरनापन तज विषय सुख, बहु दिन भजे मुरार ॥
जरठापनबिन[१]भागसठ, युवती मदनविकार ॥ १८३॥

मिथ्यादृष्टिरुवाच ॥

सवैया ।

महाराज कहों इकबात सुनो जिह ऊपरहोत कृपाल पियो ॥
जग पूरन ताहि मनोरथहै कछु चाहत नावहु औरवियो ॥

---

१ याकाभावयहहैः—उमा महादेवकी न्याई हमतुम दोनों निर्बाध निर्भय स्थितहोवै।

नव जोबनते संग मोहि लयो बिनसेवनते किह काम जियो॥
कुरुआयसुबेग करों भरतामम जाहि निमित्तसुयादकियो१८४

महामोह उवाच ॥

तोहि चितारतहैं निशिवासर वामउरू सुनि मोहि प्यारी ॥
मांहिदिवार यथा पुतली तिम नीत बसो मम चीत मझारी ॥
चीतबिषे तव प्रेम रहो मम नीतखिरे सुमनोजकी बारी ॥
सुन मिथ्यादृष्टि प्रसन्नभई, सुप्रसादकियो मुख एहु उचारी१८५

महामोह उवाच ॥

दोहा ।

औरकहों दासी सुता, श्रद्धा शांति सुजान ॥
दूतीभई बिबेककी, पत्रलिखे मदमान ॥ १८६ ॥
उपनिषत विवेक मिलापहित, भई कुट्टणी सोइ ॥
जिहविध होइ मिलाप नहिं, करो उपाय सुसोइ ॥१८७॥
एक उपाय सुमैंकहों, वही करो मनधार ॥
श्रद्धा जो उपनिषतकी, सो अब देहु निवार ॥ १८८ ॥
अकुलीनी प्रतिकूल मम, श्रद्धा पापिन नारि ॥
केशनते गहि ताहिको, देहु पखंड मतडारि ॥ १८९ ॥

मिथ्यादृष्टिरुवाच ॥

चौपाई ।

याहिकाजकी चिंत न कीजे । मम वचनते भयो पिखीजे
मेरा वचन सुने जब रंडी । तजे वेदपथ भजे पखंडी ॥१९०॥

---

१ जीवना । २ मेरी दासीकी सुता यह गाली प्रदान है । ३ स्त्रीपुरुषके मिलाप करावनेवालीका नाम कुट्टनी है । ४ नियामकरहित ।

मेरो जीवन जबलग होई । बसै पखंड ग्रहते पदधोई
पिथ्याधर्म मिथ्यामुक्ति । मिथ्यावेद मिथ्यायुक्ति ॥ १९१ ॥

दोहा ।

याबिधि मेरो वचन सुनि, तजे वेदपथसोइ॥
जनवेदन श्रद्धा मिटे, कहि उपनिषदमैं होइ॥ १९२॥

सवैया ।

जह खाननपाननती सुखहै वहु मोक्ष कहो कत आवत कामा ॥
परलोक नहीं सुखहोइ कहां उलटे सुत नारि तजावत धामा ॥
जगबंचनके हित न्योतंरची जन धूरंत वेद धरे तिह नामा ॥
श्रद्धा सुन यों पथ वेद तजे सुपखंडनके वसह्वै वहु वामा १९३॥

महामोह उवाच ॥

चौपाई ।

ऐसै करैं पियारी जबही । मेरो इष्ट सिद्धजग तबही ॥
इम कहि प्रेमभयोअधिकाई । मुखचूम्योगहिकंठ लगाई॥ १९४॥

मिथ्यादृष्टिरुवाच ॥

चौपाई ।

भूपति यह नहिं रीति सुहैहै । मेरो चीत सुबहुत लजैहै ॥
महामोह तब कीन उचारा । धस्योबनेअबवासआगारा॥ १९५॥

दोहा ।

ऐसै मुखो बखानकै, गयो अखाडो त्याग ॥
पिख भूपति विसमै भयो, गुलाबसिंहबडभाग॥ १९६॥

---

१ तव पद दासी । २ प्रकार वा ठगी वा बनावट । ३ वञ्चकोंने । ४ वांछितअर्थ ।

दोहा।

करुणा सखीसमेत पुन, शांति सुशील उदार ॥
जैहै श्रद्धाशोधहित, जगसभ पंथमझार ॥ १९७ ॥

इति श्रीमन्मानसिंहचरणशिक्षितगुलाबसिंहविरचिते प्रबोधचन्द्रोदयनाटके
द्वितीयोंऽकः समाप्तः ॥ २ ॥

इति श्रीमदुदासीनवर्य्य परमानंद शिष्य गुरुप्रसादविरचिता प्रबोधचंद्रोदय नाटक
द्वितियांऽकटिप्पणिका समाप्ता ॥ २ ॥



ॐ श्रीगणेशाय नमः ।

अथ तृतीयोऽङ्कप्रारंभः ॥ ३ ॥

दोहा ।

माया जिहि जग मोहियो, ब हु कुपंथ भरमाइ ॥
वहु रघुनायक दासके, होवै नीत सहाइ ॥ १ ॥
जिहि बिधि कलियुग फैलियो, सकल भ्रमायो लोइ॥
गुलाबसिंहनृप सभामें, प्रगट दिखावत सोइ ॥ २ ॥

सवैया ।

ते इहभांति गए जबहीं तब शांति तथा करुणा तहँ आई ॥
ऊँच बुलावतहैं जननी मम उत्तर देहु कहा मम माई ॥
शांति सुनयननीर बहै कहँ मात गई नहिं देत दिखाई ॥
तोबिन जीवन मोहिं कहां अब प्राण तजों सुलगे दुखदाई ३॥
मृगरंजतकाननप्रीतिहुती जल शैलनमें तवप्रीति नई ॥
अति पावन थानन प्रीति हुती तपसा तनमैं लवलीन भई ॥
जिम भौनचंडालन गौकंपिला तिममात पखंडन थाथ गई॥
अब जीवनमातको होत कहां तनडारइहांयमधामगई ॥ ४ ॥
बिन मोहि पिवे नाहिंनावतथी अरु नाहिंकछू जननीमुखपाए
नहिंसोवत मोहिविना कबहीं नहिंमोहिबिनापथमाहिसिधाए

१ जैसे सर्वगौओंके मध्यमें कपिला गौ उत्तमहै; तैसे शांत्यादिकोंके मध्यमें श्रद्धा उंत्तमहै ।

श्रद्धाबिनै मोहिपिखे मरती, नहिं एक महूरत प्राण रहाए ॥
अब तांबिन जीवन मोहि विडंबन, प्राणबने यमधाम सिधाए५
करुणे सजनी अब शांति मरे, जगतूं मम देहु चिता सुबनाई॥
अब मोहि बिलंब सुहातनहीं, तन देहु हुताशनमांहिं जलाई॥
जनचित्त निवासतजोंसजनीं, तहँजाउँ जहां सुगई मम माई॥
सुन शांति विलापमहाकरुणा, दृगनीर बह्यो सुलईगललाई६॥

करुणोवाच ॥

सवैया।

सजनी इह भांति कहे मुख अक्षर, ज्वालमनो सुदवानलकी॥
तन प्राण बिलातठरातनहीं, उरमोहि भयो मछलीथलकी ॥
सुमहूरत प्राण धरो न मरो, मुखकंज प्रसन्न नहो हलकी ॥
अब सोध लहे जगमें श्रद्धा, न मुई कछुबात भई कलिकी७॥
इत औ उत पुन अरण्यपिखेमुनिआश्रमजेसुतपोबनमाहीं ॥
तटगोमतिके यमुना तटमें कि बसी सुभगीरथिकेतटमाहीं ॥
कदाचित मोहमहीप डरी, छपिजाइ बसी गिरि कंदरमाहीं ॥
कुरुजांगलके मखसाळनमें श्रद्धा कहूं जाइबसी जगमाहीं८

शांतिरुवाच ॥

दोहा।

सखी निहारेगी कहां, श्रद्धा कथा न लेश ॥
मैंकुरुक्षेत्र सुगोमती, औरपिखे सभदेश ॥ ९ ॥

---

१ मोहि पिखे विन श्रद्धा मरती, इस कहनेकर श्रद्धा शांतिकी व्याप्ति प्रतीत होवैहै अर्थात् जहां श्रद्धाहै तहां शांतिहै। २ अग्नि। ३ वनकी अग्नि। ४ कलिका विडंबन है।

सवैया ।

सरितातटमें बहुभांति पिखे तपसी जिनमाहि अनेकसुहाए ॥
पुन मोहि मीमांसकधाम पिखे चमसांकर थूपसुथान बनाए॥
पुन आश्रम चार निहाररही दिनकोटिनकोटन जातगिनाए ॥
नहिंबात सुनी कहूं काननमेंश्रद्धासजनी किहठौरवसाए १०॥

करुणोवाच ॥

चौपाई ।

सखीकहों श्रद्धाहै जोई। पखंडनके वसपरे नसोई ॥
जे अतिपुण्यवती जगनारी। ते यों बिपति न लहे प्यारी ॥११॥

शांतिरुवाच ॥

दोहा ।

सखीकहों इकबात सुन, जो धाता प्रतिकूल ॥
कहो असंभव कौनगति, वेसभ अपदा मूल ॥ १२ ॥

सवैया ।

जनकात्मजा गृह रावणके सुबसी दुःखभांति अनेकभरे ॥
वस दानव वेदत्रयी सुभई तिनजाइ रसातल बासकरे ॥
पुन गंधर्वकी दुहिता पतिदैत्य हरी सुमदालस रूपवरे ॥
बिधिबासभयेजगमें सजनी कहुआपदकौनन शीशधरे ॥१३॥

---

१ पात्र विशेष। २ कार्य्याऽसिद्धिमें क्या आश्चर्यहै। ३ सीता। ४ मदालसा नामक कन्या पातालकेतु नामक दैत्यने हरली यह गाथा तुलसीदासकृत रामायण, तथा श्रीमद्भागवतमें प्रसिद्धहै इसप्रकार श्रद्धाका पाखण्डोंके हस्तमें जानेका दैवही मूलहै वेदवाह्यकानाम पाखण्डहै।

दोहा।

तातैं चले पखंड ग्रह, श्रद्धा तहां जिहोइ ॥
करुणाकह्यो सुचलु सखी, इमकहि चाली दोइ॥ १४॥

सवैया।

करुणा तहँ अग्रविलोक डरी सजनी मम राक्षसनैन निहारे॥
पुनि शांति कह्यो कहि राक्षसहैकरुणा तब पीठहिपीठउचारे॥
मलपंक गिरे मुखदंतनते तनमें दुरगंध भयानक भारे॥
मुक्ताकेटिकच्छ मलीन महा इहमूंडपिसंग सुझंड खिलारे १५॥

दोहा।

पूछ सिखंडसुकरविषे, आवतहै इत ओर ॥
नैन निहार न मैं सकों, चित्त डरतहै मोर ॥ १६ ॥
शांतिकह्यो राक्षसनहीं, पुद्गलहै बलहीन ॥
करुणा कहे सुकौन पुन, ऐसो परम मलीन ॥ १७ ॥
शांति कह्यो सुपिशाच यह, ऐसे मेमन आइ ॥
करुणा कहे पिशाचनहिं, वहु निसमें प्रगटाइ ॥१८॥
सूर्य आहि आकाशमें, किरणप्रकाशे लोइ ॥
ऐसेसमै पिशाचका, कहि अवकाश सुहोइ ॥१९॥
शांति कह्योसुपिशाचनहिं, तो यह पापी आहि ॥
निकस्यो अबहीं नरकते, आवतहै पथमाहि ॥२०॥

---

१ खुलावस्त्र कटिमें कच्छाहै लगाया है। २ मस्तकमें भूरेरंगकी जटा सरीसी। ३ मोरछल। ४(पुद्गलं वपुरात्मनः)अर्थयहः-आत्माके शरीका नाम पुद्गलहै यह कोषमें कहाहै, याते बलहीन कोई पुरुष है।

बहुरोशांतिविचारकर, अब मैं लखियोनृतांत ॥
महामोह पठयोअयो, यह जग जैन[1] सिद्धांत ॥ २१ ॥
याको दर्शन दूर तज, यह अति पतित मलीन ॥
ऐसे शांति बखान कै, फिरिचाली मुखदीन ॥ २२ ॥

करुणोवाच ॥

दोहा ।

सखीमहूरत थिररहो, श्रद्धा लेहु निहार ॥
यही पखंडी भाखिये, मत या भवनमझार ॥२३॥
गुलाब सिंह इम भाषकर, दोनों खरी इकात ॥
तब नृप सभा प्रवेशकर, बोल्यो जन सिद्धांत ॥२४॥
नमोनमो अर्हन्तपथ,जे जन चले उदार ॥
भुक्तिमुक्ति दोनो लहै, मैं अब करो उचार ॥ २५ ॥

कवित्त ।

नव है द्वार तन भौनके मझार पुन,
आत्मा प्रकाशदीप[2] ताहिमें सुहाई है ॥
जैन वरभारव्यो सिद्धांतसुइकांत[3] यह,
गहे जनजोई जगसूख मोष पाइ है ॥
अरे सुन श्रावक[4] सुवाकमें बखानो तुम,
मलमय पमाणुते सुदेश उपजाइहै ॥
मूढनर शुद्धकरें शीतजल शीशधरें,
होवत न शुद्ध जलकोटन नवाइ है ॥ २६ ॥

---

१ दिगम्बर सिद्धान्तशास्त्र । २ दीपक दृष्टान्तसे आत्मापरिच्छिन्नपरिमाण वाला हुवा । ३ व्यभिचार रहितहै अर्थात् निर्दोषहै । ४ शिष्य ।

दोहा।

आत्म विमल स्वभाव है, रिषिसेवा तिहज्ञान॥
रिषि सेवाकैसीकहो , सुनहोकरों बखान॥ २७॥

सवैया।

दूरिहिते पदपंकजको अभिवन्दनशीश निवाइ करो॥
भोजन जो मिष्टान्न महा नित ताहि जिवावहु जोरकरो॥
घरभीतर जो रिषि बासकरे, मनमैं नहि रंचक रोष धरो॥
गोपहुतो मत खोलिकह्यो इहभांति करो भवसिंधुतरो॥२८॥
पुनि नेपथ्य ओर बिलोकी कह्यो श्रद्धे इतआउ कहां चिरलाए
करुणा तिह शांति निहारतथी,इनपेखत कोन कनात हलाए॥
श्रद्धा तहँ आइ समाजबरी पुन जैनसमान सुवेख बनाए॥
कहि आयसुमोहिसुबेगिकरों,सुन शांति दुःखीसुभईमुरझाए२८

क्षपणक उवाच॥

दोहा।

स्रावग निखिल कुटंबको, श्रद्धे तूं गहि आज॥
कबहुं महूरत नातजी, सिद्धहोइ मम काज॥ ३०॥

दोहा।

जो आयसु सोईकरों, राजकुलीन महान॥
इम कहि निकसे वै दोऊ, करुणाशांति बखान ३१॥

करुणोवाच॥

दोहा।

सखी प्यारी धीरधर, काहे तूं डरपाइ
नाममात्र श्रद्धा कहैं, है कछु और बलाइ॥ ३२॥

चौपाई।

अहिंसा देवी मोहिं सुनाई । पखंडधाम श्रद्धा इक आई ॥
परवहु अंबातेहै आन । तामस श्रद्धा कहै बखान ॥ ३३ ॥

दोहा।

ताते श्रद्धातामसी , यह तूं क्यों डर पाइ ॥
ऐसे करुणा भाखियो, अब पुन शांतिअलाइ ॥ ३४ ॥

शांतिरुवाच ॥

चौपाई।

सावधान सजनी मैं होई । जैसें कहैं बातिहै सोई ॥
यह अतिदुराचारणी हैं ये । अंबा सदाचार रतिपैं ये ॥ ३५ ॥
यह दुर दर्शनरूप मलीनी । अंबा प्रियदरशन सुखभीनी ॥
ऐसो रूप ताहि नहिं होई । संसा मनमें करो न कोई ॥ ३६ ॥
अंबा याके बस नहिं होई । जो तूं कहे बात है सोई ॥
चलैं अगारी सौगत धामा । तहाँ मिलै जो बहुअभिरामा ३७
यों कहि चली अगारी जबहीं । भिक्षुक एक निहार्‍यो तबहीं ॥
पुस्तक हाथविषे दर्शायो । बौद्धसिद्धांत सभामहि आयो ३८

भिक्षुक उवाच ॥

चौपाई।

क्षणभंगुर सकल पदार्थ हैये । है भीतरबाहर समपैये ॥
अहे निरातममाहि ज्ञान । दर्पणसम मुख होवै भान ॥ ३९ ॥

---

१ बुद्धशास्त्राऽभिमानिदेवता। २ घटादिकविषय बुद्धिमें कल्पितहोनेसे अन्तरवर्ति-हुएभी भ्रांतिसे बाहरकी न्याई प्रतीत होवै है। अहे निरातममाहिं ज्ञान। दर्पणसममुख होवैभान। याका अन्वय यहहै:-ज्ञानमाहिनिरातमअहै अर्थात् ज्ञान कहिये बुद्धिरूप-आतमामें प्रवृत्तिविज्ञानधारारूप अनात्मस्थितहैं सो आत्मख्यातिसेंबाह्यप्रतीत होवैहै जैसें ग्रीवा स्थितमुखदर्पणमें भासे है तैसे।

सो बहुज्ञान वासना हीन। फुरे विषय विनु लखैप्रबीन ॥
यों कहि पोथी आगे धरी। शीशनिवाइप्रकरमाकरी ॥४०॥
अहो साधु यह धर्म सुहायो। जो निजमुखते बुद्ध बतायो ॥
यामैं सुखमोक्ष जगदोई। खेदबिना जनपावै सोई॥ ४१॥
सेवकके निज भौनमझारे। सुंदरवास सुमाहि चुबारे ॥
मनअनुकूल बनककी नारी। बहुविधि भोजन धरेसवारी४२॥
कोमलसेज सुवणक बिछाए। जोर दोऊ कर देइ बैठाए ॥
श्रद्धासहित उपासक जेत। युवतीसहित भजे पदतेते॥ ४३॥

दोहा।

अंगराग तनलाइकै, वणक मनोहरनारि ॥
भजे निशाशशिऊजली, पद निजपाणि मझार ॥४४॥

करुणोवाच ॥

सवैया।

सजनी यह कौन सुआहिइहा तनुतालसमान सुजाहिलंबायो ॥
सुपिसंगकषाय धरे तन अंबर सूक्ष्मजो धरमै लटकायो ॥
पुन भाल सुकिंचित मुंडतहै किपि खो कचमूलहुतेउखडाय॥
द्रुमछाल बिसालसुनाल धरी नयती यह जान परे रसकायो ॥

शांतिरुवाच ॥

दोहा।

बौद्धागम सजनी इहै, भिक्षुक रूपबनाइ ॥
वंचतहै सभलोकको, यों मेरे मनआइ ॥ ४६॥

१ कुंकुमचन्दनादिलेप। २ लाल तथा सुगन्धीवाले वस्त्रधारणकीये हैं।

भिक्षुक उवाच ॥

दोहा।

यतीउपासक औरसभ, सुनो सुनिजनिज कान ॥
वाक सुधारस बंधहर, कहे सुगत भगवान ॥ ४७॥
योंकहि पुस्तक लीनकर, खोलि नवायो शीश ॥
गुलाबसिंह पेखत सभे, राजसमाजमहीश ॥४८॥
दिव्यनैनसभकी पिखो, गति शुभाशुभ दोइ ॥
क्षणभंगुरसभ भावहैं, थिर नहिं आतमकोइ ॥४९॥

सवैया।

इमजानत जो सभमोहजितोनिजदारन और अगारनमाही ॥
भिक्षुकजो घरमाहि रमे तब द्वेष न रंच करो मनमाही ॥
मनको मलतो इहभांति मिटे पुननेपथ्यपेखि कह्योमुखमाही॥
श्रद्धे इतआउ बिलंबकहा सुप्रवेशकियो श्रद्धाक्षणमाही ५०

श्रद्धोवाच ॥

दोहा।

देव करो आयसु प्रगट, करों कौन अब काज ॥
मैंक्षणमें सोईकरों, तुम सभके सिरताज ॥ ५१॥

भिक्षुकउवाच ॥

दोहा।

भिक्षुक सेवकसकलजे, ताको गहि निजहाथ ॥
मोहिमते अतिथिरकरो, सभे निवावे माथ ॥ ५२॥

१ यती नाम साधु तथा सेवक। २ पदार्थ। ३ बुद्धिस्थितिरहित है।

श्रद्धोवाच ॥

जो आयसु सोईकरों, ऐस बखाने बैन ॥
निकसि चले वै सभाते, शांतिनिहारे नैन ॥ ५३ ॥

शांतिरुवाच ॥

सजनी यहभी तामसी, श्रद्धा जानी मोहि ॥
करुणा कह्यो सुऐंवहै, भली पछानी तोहि ॥ ५४ ॥
याअवसर क्षपणक अये, लाबो डीलसुहाइ ॥
भिक्षुक जातो हेरकै, ऊचेलयो बुलाइ ॥ ५५ ॥
रेभिक्षुक इतआउ तुम, कछु पूछो अब तोहिं ॥
तेरी मेधा मैं पिखों, प्रगट बखानो मोहि ॥ ५६ ॥
सुनि भिक्षुक पुनि कोपियो, भाषे वचनकठोर ॥
हापापी मलपंकधर, लेहि परिक्षा मोर ॥ ५७
क्षपणक कहे सुक्रोध तज, करो बेगि अतिरोध ॥
शास्त्रगति कछु पूँछहों, काहेकरो सुक्रोध ॥ ५८ ॥

भिक्षुक उवाच ॥

क्षपणक तू कछु जानहै, शास्त्रकथा उदार ॥
भवतु प्रतीत पूछो सुअब, भाखों क्रोधनिवार ॥ ५९ ॥

क्षपणक उवाच ॥

चौपाई ।

क्षणभंगुर तव मतआत्मअहै । काहिनिमित्त ब्रततुमगहै ॥
याको उत्तर प्रथम उचारो । क्षणक आत्मा किहबिधितारो ६०

१ अरेक्षपणक शास्त्रमपिवेत्सि । भवतुप्रतिक्षामस्तावत् उपसृत्यकिंपृच्छसि । यह संस्कृतका पाठहै अर्थ यहः-भवतु कहिये जैसा तू जानताहै तैसा जाणो परंतु मैंभी तेरी परीक्षा करताहूं ऐसे कहिकर भिक्षुक क्षपणकके समीप जायकर कहनेलगा कहुं क्या पूछता है क्रोधरहित होय कर मैं तेरेको उत्तर कहताहूं यह दोहाका भावहै ।

भिक्षुक उवाच ॥

अरे अरे अब करों बखान । मेरो मतो सुनो निजकान ॥
विज्ञानलक्षण आत्महै जोई । रहे संतान मरे क्षण सोई ॥६१॥

दोहा ।

अस्मतपंक्तिपरो[1] पुनः, कश्चितज्ञान सुहोइ ॥
नष्टवासना ऊजलो, मुक्ति लहेगो सोइ ॥ ६२ ॥

क्षपणक उवाच ॥

चौपाइ ।

सुन मूर्ख जन्मान्तरमाही[2] । जो आतमको मुक्ति लहाही ॥
तो अब नष्टकलेवर थारा । कौनलाभको तव उपकारा ॥६३॥
पूछों और सुनो मनलायो । किन तव ऐसो धर्म बतायो ॥
ननु सर्वज्ञ बुद्धहै जोई । ताहि कह्यो यह धर्म सुसोई ६४

दोहा ।

बुद्ध भयो सर्वज्ञ जो, कैसे जान्यो तोहि ॥
याको उत्तर होय जो, प्रगट बखानो मोहि ॥ ६५ ॥

भिक्षुक उवाच ॥

चौपाई ।

बुद्ध बनायो आगम जोई । तामैं कह्यो सर्वज्ञ सुसोई ॥
तातें तां सर्वज्ञ सुजाने । बुद्धवाक यह प्रगट बखाने ॥६६॥

---

१ अस्मतपंक्तिकहिय विज्ञानसंततिमें विज्ञानपरंपरामें कश्चित्कहिये कोई विज्ञानलक्षणपुरुष प्राप्तज्ञानवाला तथा ऊजल तथा वासनारहित हुआ सोई मुक्तिको पावेगा ।
२ यदि मन्वन्तर कालान्तर में कोई आत्मा मुक्तिको पावेगा तो अब तेरे शरीरके नष्ट होयां तुमको लाभ उपकार करेगा न कछुभी करेगा यह चौपाईका भावहै ।

क्षपणक उवाच ॥

सवैया।

बुद्धवाकनते सर्वज्ञ सुबुद्ध जबै, रिजुबुद्धि सु ताहि पछाने ॥
लो सर्वज्ञ सुमोहिलखो जगमें, सबभूत भविष्यत जाने ॥
पितरपितामह सातकुलीलग, तू मम दासनही ममछाने ॥
सुनके यहबात दिगंबरकी, पुनि भिक्षुक चीत्त वडे खुनसाने६७

भिक्षुक उवाच।

दोहा।

हा पिशाचपापी बडे, मोको कहे सुदास ॥
दंतपंकधर मलन अति, बुरीसुतें तनबास ॥ ६८ ॥

क्षपणक उवाच।

चौपाई।

रे विहार दासीके पियारे। यह इक मम दृष्टांत उचारे ॥
कोपन तू मनभीतर आन। तेरो हित अब करो बखान॥७९॥

दोहा।

बुद्धअनुसासन दूरतज, अर्हंतमतो सुधार ॥
मोहि दिगंबरपद लहो, देहु सुबसन उतार ॥ ७० ॥

भिक्षुक उवाच ॥

चौपाई।

हा पापी तू भयो सुनष्ट। औरन नाशवहें अतिदुष्ट ॥
मनो मशान पिशाचहि आयो। यों तव देख लोक डरपायो॥

१ वेश्याके अर्वा यह हमने दृष्टांत कहाहै।

लोकअनिंदत जो बड भागी । अपनो राजसूख बहुत्यागी ॥
तेरो वेस पिसाच सुजोई । कौनचहे भवभीतर सोई ॥७२॥

दोहा ।

अर्हंत नहिं सर्वज्ञथो, धर्म कहे किह सोइ ॥
तो बिनश्रद्धा ताहि मत, कहो सुकांको होइ॥ ७३ ॥

क्षपणक उवाच ।

चौपाई ।

ग्रहनक्षत्र सकल सोजाने । चंद्र रविको ग्रहण बखाने ॥
नष्ट लाभ पुन भावीज्ञान । पाछे भई सु करे बखान ॥ ७४॥
गणनामहि अंतर नहिरहे । अतीन्द्रियवस्तुज्ञान वहुकहे ॥
तातेहै सर्वज्ञ अर्हंत । ऐसैं माने जे जगसंत ॥ ७५ ॥

कविरुवाच ॥

दोहा ।

सुन भिक्षुक अतिशयहँस्यो, भूपति सभामझार ॥
गुलाबसिंहगति औरही, लागोकरन उचार ॥ ७६ ॥

भिक्षुक उवाच ।

चौपाई ।

अनादिकालका ज्योतिषजोई । अतीन्द्रयज्ञान कहे सबकोई॥
तांपरेंतारक तुम जग भये । कष्टव्रत शिरपर धरलये ७७॥
और कहों इककरो बखान। तव मतजीवशरीर प्रमाण ॥
बिनासंबंध त्रिलोकीज्ञान । ताको किहविध होइसुभान७८॥

---

१ अर्हंत तो सर्वज्ञ था नहीं तिसने धर्म किसप्रकार कहा सो कहिये। २ वञ्चक। ३ विज्ञानरूप।

कुंभोपहित दीपकहै जोई । यद्यपि शिषा बडीतिह होई ॥
ग्रहमैं अहै पदार्थ जेते । कबी प्रकाश सके नहिं तेते॥७९॥
ताते अर्हतदर्शन जोई । उभै सुलोक विरोधी सोई ॥
सौगतदर्शन अतिसुखकारे । वहु हम सुंदरनयन निहारे॥८०॥

शांतिरुवाच ॥

दोहा।

सजनी श्रद्धा नहिंइहां, चलैं ठौर अब आन ॥
करुणा कह्यो सुएवकर, आगे कियो पयान ॥ ८१ ॥
शांतिसु आगे देखकर, बोली वचनउदार ॥
सोमसिद्धांत सुयह खडो, आगे सखीनिहार ॥ ८२ ॥
भवतु तथा करुणाकह्यो, चले समीप सुयाहि ॥
मतश्रद्धा तह होइ पुन, अबलौ पेखीनाहिं ॥ ८३ ॥
तबै कपालकरूपधर, सोमसिद्धांत प्रवेश ॥
कीनो सभामझार तह, जहकीरति वरम नरेश ॥ ८४॥

सवैया ।

नरहाडनकी गल मालधरी, शंवदंतनके श्रुति कुंडलछाए ॥
भुज अंगदहाडनके सुधरे, निशको सुमशाननमाहि बसाए॥
मज्जन छारविषें सुकरे, तनमें, सुमशानकी छार लगाए ॥
अतिभीषन आहि अकारबडो, नरमूंडकपाल सुभोजनपाए८५

१ शास्त्र । २ उमाके साथ जोहोवै सो कहिये सोमसिद्धांतशास्त्र । ३ मुद्दाके ।

कपालक उवाच ॥

दोहा ।

योगांजनसों मैं पिखों, जोकछु जगत मझार ॥
भिन्नाऽभिन्ना[1] सो ईशते, लीनो जगत निहार ॥८६॥

कविरुवाच ॥

क्षपणक ताहि बिलोकिकर, भिक्षुक कीन उचार ॥
एहु कपालक बृतीनंर[2], पूछे ताहि विचार ॥ ८७ ॥
क्षपणक भिक्षुक पूछियो, ताहि समीप सुजाइ ॥
कपालकरे नरमूंडधर, हमे सुदेहु बताइ ॥ ८८ ॥
हमरे उर संशयभयो, धर्मसुतें मत कौंन ॥
तबै कपालक बोलियो, महा अमंगल भौन ॥८९॥

कपालक उवाच ॥

कवित्त ।

सुन क्षपणक अब तोहिको बखानकरों,
सुनके हमारो धर्म चित्तमाहि धारिये ॥
भालके कपाल यह चरबी बिसाललगी,
मांसकी अहूतीगहि पावक सुडारिये ॥
भूसुर कपाल यह डारमदरा बिसाल पुन,
कीजे मुखपान इम वृतको उपारिये ॥
काट नरमुंड हम भैरवसुझुंड[3] भजें,
श्रोणतकी धार पांव भैरवपषारिये ॥९० ॥

१ जगत् परस्पर भिन्नहै ईश्वरसे अभिन्न है। २ वेषधारी। ३ समूह।

सुनकै सुभिक्षुक दबाइ दोऊकानलए,
क्षपणक ओरपुन ऐसोतो अलायोहै ॥
सुनो बुद्ध बुद्धवंत संतहो महंत बडे,
दारुण सुधर्म कपालक बतायोहै ॥
क्षपणक ताहिको पुकार जनमाहि कह्यो,
घोरपापकारी किने याहिको ठगायोहै ॥
गुलाब सिंह सुनत कपालक कराल अति,
कीने दृगलाल मनमाहि खुनसायोहै ॥ ९१ ॥

कपालक उवाच ॥

कबित्त।

मुंडत सुमुंडरे चंडाल भेषपापीबडे,
बडेही पखंडी शिर केसन पुटाइहै ॥
लोकनके ठगरे सुभागते पलाइगए,
शिवको महानपथ ताहिमें नआइहै ॥
चतुर्दश भौनजोई क्षणमें उपाइलए,
करें प्रतिपाल पुन क्षणमें खपाइहै ॥
वेदांतके सिद्धांतमें प्रसिद्ध प्रभाव जाहि,
पूरन भवानीपति लोग वेद गाइहै ॥ ९२ ॥
ताहिको सुमतलयो जाहिको प्रभावनयो,
धर्मको महातम सुनैन देखि लीजिए ॥
विष्णु दिजेश औ सुरेश आदिवडेदेव,
नैननके निहारो कहोईहा आनदीजिए ॥

---

१ जैसे वैष्णवमतमें हेविष्णो हेविष्णोऐसे वैष्णव उच्चारण करतेहैं तैसे बुद्धके मतमें बौद्ध भी हेबुद्ध हेबुद्ध ऐसे उच्चारण करतेहैं।

नभरविचन्दऔनक्षत्रकेकदंबजिते,
कहो याहिगतेधर बैठेहीरुकीजिए ॥
कहो नरनागर सुभूमिजल पूरदियों,
कहो क्षणभीतर सुतोयसभ पीजिये ॥ ९३ ॥

क्षपणक उवाच ॥

सुनरे कपालक सुभईमति बालक;
सुमानवको मूंड तव करमै उठायोहै ॥
काहू इंद्रजालक सुमायाको दिखाइ तब,
मोह मन लयो उर तोहको भ्रमायोहै ॥
ऐसे सुन कान सुकपालक मलान अति,
दाबि दोऊकान मनमाहि खुनसायोहै ॥
इंद्रजालवत भगवंतको[1] सुमूढकहैं,
तीनलोक जाहि क्षण एकमै बनायोहै॥ ९४ ॥
तोहि दुष्टात्मता सुमोहिते नसहीजाइ,
काढिके सुखडग अब करमै डठाइहों ॥
कालकरवालसों उतार भाल तेरो अब;
कंठ तव नालते सुलोहूकोचुआइहों ॥
डमरू बजाइ पुन भूतकिलकाय संग.
काट तव मूंड सुभवानी को चढाइहों ॥
श्रौणतकी धार छुटे फेन अरु बूंद उठे,
पेखि मुखहस शिवपतनी रिझाइहों ॥ ९५ ॥

---

१ महादेव ।

दोहा।

एसे मुखो उचारकै, लीनोखडगनिकार ॥
क्षपणक पिख उर भयभयो, लागो करन उचार॥९६॥

क्षपणक उवाच।

दोहा।

अहिंसा परम सुधर्महै, महाभाग इमजान ॥
बरचो सुभिक्षुक अंकमैं, ऐसे मुखो बखान ॥ ९७ ॥
तब भिक्षुक कपालकको, वारन कीनो आप ॥
महाभाग भैरव भक्त, क्षपणकहै निहपाप ॥ ९८ ॥
कौतुककथानिमित्त अब, हनो न याके प्राण ॥
कपालक ऐसे सुनतही, कीनोखडगमियान॥९९॥
क्षपणक स्वस्त सुहोइकर, बहुर पुछे विख्यात ॥
महाभाग यद्यपि कुपें, तदपि पूछों बात ॥१०० ॥
कह्यो कपालकपूछ अब, क्षपणक प्रश्न सुकीन ॥
मैं सुनियो तुमरो धरम, अहे सुपरम प्रबीन ॥ १०१॥
कैसे तव मत सूखहै, कैसे मोक्ष तुम्हार ॥
मैं उरमें संशयभयो, नीके करो उचार॥ १०२ ॥

कपालक उवाच ॥

चौपाई।

विषयविना सुख कहूं न पेखै। आनँद बोध विषयमैं लेखै ॥
ताते विषयभोगहै जोई । वहीसूख[1] कछु औरनहोई॥१०३॥

---

१ सुखानुभव।

आत्मस्थित मोक्ष बखाने । ते पशुबुद्धि सुमहा अजाने ॥
उपलअवस्था बहुजगअहै। बुद्धिवंत तिह किह बिधचहै॥१०४
अपनीवयकी जो अनुरूपा। युवती मिले सोमोक्ष अनूपा ॥
यापर संमंत तोहि दिखाऊं। तेरो सब संदेह मिटाऊं ॥१०५ ॥
पारवती प्रतिरूप नवीना । तासंगरहे सदा सुखभीना॥
चन्द्रचूड शिव मुक्तिभनीजे।क्रीडाकरें दरस दुःखछीजे॥१०६

भिक्षुक उवाच ॥

दोहा ।

श्रद्धालायक नाअहे, महाभाग यह रीत ॥
विषयराग बीत्यो नहीं,मुक्ति कहा तिहमीत॥१०७॥

क्षपणक उवाच ।

दोहा ।

अरेकपालक रोषतजि, पूछों बात प्रसिद्ध ॥
अर्ध शरीरी मुक्तिपुन, यह मत सकलअशुद्ध ॥१०८॥
सुनत कपालक मनविषे, कीनो इहे बिचार ॥
याके अतः करणमैं, अहे अश्रद्धाभार ॥ १०९ ॥
निजमतश्रद्धा आज पुन, लीजे बेगबुलाइ ॥
मुखोंबखान्यो प्रगट तिन, श्रद्धे तूं इतआइ । ११० ॥
तब आई श्रद्धा तहां, रूप कपालक धार ॥
करुणा ताको हेरकर, कीनो शांतिउचार ॥ १११ ॥

१ सुखानुभवसे रहित जे जीवकी स्थिति मुक्ति मानतेहैं । २ दृष्टांत । ३ पार्वतीके सदृश स्त्रीके साथ जो क्रीडाकर्ताहै सो मुक्त कहाजावैहै ऐसे महादेवजी कहतेहैं अर्थात् उमासहित महादेवके उपासकोंको सरूपामुक्तिकी प्राप्तिहोतीहै यहतात्पर्यार्थहै। ४ अर्धंगीकी प्राप्तिही तिनके मतमें मुक्तिहै सो पूर्वकहा भी है अपनीवयकीजोअनुरूपा। युवती मिलेसो मोक्षअनूपाइति ।

सखी रजोगुणकीसुता, श्रद्धा याहि पछान ॥
गुलाबसिंहकवि रूप तिह, आगे करे बखान॥११२॥

सवैया ।

नील सरोज विलोल महादृग माग संधूर सुपूर बनाई ॥
सुंदर भूषण आहि घने नर हाडनकी गलमाल सुहाई ॥
पीननितंब सुपीनकुचाकटि मध्यम आननचन्द लजाई ॥
आइ प्रदक्षण ताहि दई कहिस्वामिन आयसु देहु बताई ॥
है अभिमान बडो इनको अब भिक्षुक को गहिलेहु पियारी ॥
योंसुनबात कपालककी हँस, भिक्षुक अंकमिली भुजडारी ॥
भिक्षुक सानँद अंकलई तन रोमखडे सुजगे शिवआरी
सुअहोमुख याहि कपालनिका हम धंनभये इमबात उचारी ॥
पीन पयोधर नारि कबू जिनके मतना मम अंक छुहाई ॥
भूलपिखो तब मारकरें अरु दोषजनावत ग्रन्थ सुनाई ॥
श्रावग औ तिनग्रन्थनको शतबार धिकारबडे दुःखदाई ॥
आज कपालनिपीनकुचाछुहि मोदबढे सुबडी सुखदाई११८
सुअहो शुभपुण्यकपलकके जिनके मतयाबिधकोसुखपैये ॥
सुअहो यह सोमसिद्धांत बडो, जिनके सम और नदूसरहैये॥
पुन है यह धर्म अचंभ बडो, बडभाग सुनो सुकहामुखगैये॥
अब मै दृढश्रावग पंथतजे,कबहू तिनके मत भूल न जैये१६
परमेश्वरको यह सोमसिद्धांत, सुतांहिविषे अब मैंचलआयो॥
अब तूं गुरुशिष्यसु मोहि पिखोगुरुसीषदिजे सुपरेतव पायो
पिख ताहि दिगंबर कोपभये, सुकपालनिसोंतवअंगछुहायो॥
शठभिक्षुकदूरचलो अति दूषत क्यों मम आवतहै निकटायो

१ कामदेव ।

दोहा ।

तब भिक्षुक क्षपणक कह्यो, वंच्यो पापविसाल ॥
याहि कपालनिसंगसुख, कहां तुम्हारेभाल ॥ ११८॥

चौपाई ।

तब भिक्षुक पुन एहु उचारी । क्षपणकको गहुबेगप्यारी ॥
क्षपणकअंग मिली दृगलोले ।भयेरुमंचसुक्षपणकबोले॥ ११९

सवैया ।

सु अहो सुन श्रावग श्रावगजू सुकपालनिसंग बडोसुखदाई॥
अतिसुंदर देह सनेह बढे, सुहिफेरमिलो भुजदंड लँबाई ।
सुन श्रावग सूख महानभयो, यह अंमृतकी सुविरंचि बनाई॥
अबजाइ इकंत रमोतिनसों,इमगूढतिने मनमाहि ठराई॥१२०
घनपीनपयोधरसोभिन तूं,मृगशावकभीत सुनैन तिहारे ॥
सुकपाल निजोममसंग रमे, तब श्रावगको डरुनाहिंहमारे ॥
सुकपालक आगमधनअहो, जिनभीतर मोक्षसु सूख अपारे॥
सुकपालक आज अचार्य तूं,हमदास भये तव पादजुहारे १२१

दोहा ।

भैरवके अनुसारने, शिक्षा दीजे मोहि ॥
मैंसभ पंथ निहारया, पूरण पेखे तोहि ॥ १२२ ॥
कह्यो कपालक दोनको, बैठो मो ढिग आइ ॥
तब क्षपणक भिक्षुक तथा, बैठे मोल झुकाइ ॥१२३॥
कपालक भांजन हाथलै, बैठो लाईध्यान ॥
श्रद्धा तबै कपालनी, ल्याई सुरा महान॥ १२४ ॥

१ महाभैरवशास्त्रानुसारी ।

सवैया।

भगवंत महंत बडे जगसंत, सुमैमदसों यह पूर्णकीयो ॥
तब नैन उघार बिलोकि भलीबिधि, आप कपालकसोमदपीयो
कछु शेषरह्यो मदभांजनमैं, तिनभिक्षुक और दिगंबरदीयो ॥
यह पावन अंमृत पानकरो, सबबंधतजोसुखसोंसुतजीयो १२६

तथाच तंत्रे

पीत्वा पीत्वा पुनः पीत्वा, यावत् पतित न भूतले ॥
उत्थाय च पुनः पीत्वा, पुनर्जन्म न विद्यते ॥ १ ॥

सवैया।

भवभेषज है पशु पाशकटे, मदपानसु भैरव आप बतायो ॥
इतते मनमाहि विचार करैं, सुदिगंबर योंमुखमाहिंअलायो ॥
हमरे मतमै मदपान नहीं, सुअर्हंतगुरुमुहि आप छुडायो ॥
किहभांति कपालक जूठपिवों, मदिराइहभांतिसुभिक्षुकगायो॥
सुकपालक पेख कह्यो श्रद्धे, सुविचारकरैं मनमें सकुचाए ॥
अबलौं मति याहि मलीन अहे, पशुभावनहीं इनके सुमिटाए॥
हमरे मुख संग सुदोष अपावन, याहि सुरा मनमाहिं ठराए॥
अब तूं मुखआसवपूरणकै, इन देहु सुराजु इने भ्रम जाए१२७॥
सुसदा शुचि नारिनको मुखहै, इहभांत कहें कवि बेदबीयो ॥
श्रद्धा सुकपालक जोरदोऊ कर, नाथ कहो सुबनै अबकीयो॥
मदभांजन लै मुखपानकरे, पुन शेष सुभिक्षुककै कर दीयो॥
सुहिआजप्रसादमहानभयो, इमभाषसुभिक्षुकसोमदपीयो १२८

---

१ मूर्खता। २ अपने मुखमें मदिरा पवित्रकरकै। ३ स्त्रीमुखं तु सदा शुचिः ऐसे कहाहै परंतु तहां अपने स्त्रीकामुख शुचिहै यह कथन है परस्त्रीके मुखका निषेध है. पापका जनकहोनेते।

सुअहे यह आसव गंधबडी, सुखपानकरे मनमे बिगसाई ॥
नहिं बारबधूसंग पानकरे, मुखगंध सरोजसमान सुहाई ॥
सुकपालिनिके मुख गन्धमिली, अबपीवसुरासभमेंसुधआई
सुर सांच सुधा उर चाहतहैं, अब मोहि त्रिलोकिसुदेत दिखाई

क्षपणक उवाच ।

दोहा ।

रेभिक्षुक मतपीव सभ, भयो प्रसादसु तोहि ॥
याहि कपालिनि जूठमद, देहु कृपाकर मोहि ॥ १२० ॥
तब भिक्षुक मद चखकर, दीनो क्षपणकहाथ ॥
पीवत प्रसन्न सुहोइ मन, बोल्यो श्लोक सुमाथ ॥ १२१ ॥

सवैया ।

सुअहो मदस्वाद महांमधुरो, सुअहो मदगंध बडी सुखदाई ॥
चिरबेमुखयासुखते सुरह्यो, सुअहंतकरी मोहि भूरिठगाई ॥
सुन भिक्षुक मेंदृग घूमतहैं, सभ अंगनमै उपजी अलसाई ॥
अबसैनकरों पुन भिक्षुकतो, अबऐंव करोमुखबातअलाई १३२

सवैया ।

वहु दोन तहां तब सोइ रहे, सुकपालक योंमुखमाहि उचारे ॥
पिख एहु कपालिनिदोनो परे, बिनमोलभये अबदासहमारे ॥
अब नाचकरें तब दोऊनचें, पिख ताहि दिगंबर नैन उघारे ॥
भिक्षुकरे गुरुसंग कपालिनि, नाचत पेख महामतवारे ॥ १३३ ॥

---

१ मदिरा ।

सवैया।

इनके संग आउ सुनाचकरें, कहि भिक्षुक एंवकरें बिगसाए॥
मदघूमत नैन सुनाचकरें, थिबके पदयों मुखमाहि सुगाए॥
घनपीनपयोधर चन्दमुखी,मृगनैन कपालिनि तोहि लजाए॥
कविसिंहगुलाब लहेंगतियों,जिनके उरमैं महामोहभ्रमाए १३४

कविरुवाच॥

सवैया।

जिनके मनमैं हरिध्यान नहीं,शुभपंथनते मिटजावहिगे॥
तजि संयमनेम असंकरहें, जगभीतर सिद्ध कहावहिगे॥
तज पंथ सनातन माहि कलू, मन बांछत पंथ चलावहिगे॥
जग फैलेगो इहभांति कलू शुभसंत अनादर पावहिगे॥१३५॥

भिक्षुक उवाच॥

दोहा।

अद्भुत आगम एहहै, कहै कपालक जोइ॥
बिनकलेश जिह मतविषे,अभिमतसिद्धसुहोइ॥१३६॥

कपालक उवाच॥

दोहा।

क्या अद्भुततातैं पिखी, और पिखो अब सोइ॥
बांछित विषय सुभोगिये,बहुर सिद्ध सभ होइ॥१३७॥

दोहा।

अणमा महिमा आदिजे, अष्टसिद्धि प्रधान॥
तेसभ यांमतमैं लहे, बिनाखेद पहिचान॥ १३८॥

---

१ भूमिमें पद स्खलितहोतेहैं नाम गिरतेहै। २ये आठसिद्धि महासिद्धि कहीजावैहैं॥

वशं आकर्षण मोहणी, और परमाथनि जान ॥
परक्षोभन उच्चाटनं, प्राकृतसिद्ध पछान ॥ १३९ ॥
योगबिघन यह यज्ञको, चहैं नाहितिहधीर ॥
परअनषंगकआइहैं, ऐसो मतो गंभीर ॥ १४० ॥

क्षपणक उवाच ॥

चौपाई।

अलेंकबालि यायों मुखगायो। क्षपणक बहुरबिचार सुआयो॥
अथवा अंले अजालेभाले। अपाॅलपलाकमअहेसुथाले १४१

सवैया।

पिख भिक्षुक ताहि हसेमुखमै, सुकपालकके प्रतिएहुउचार ॥
मदरा बहुपानकरी तपसी, मतिभूलगई सुभये मतिवार ॥
मुखवाकसु व्याकुल एहुभयो, मदको उनमादसु देहु निबार॥
सुन भिक्षुक बातकपालकतौ, मुख भीतरतेसुतंबूलनिकार १४२
मुखसीत तंबूलकपालकजो, सुदिगंबरको निजहाथ दयो ॥
मदको मद दूरभयो क्षणमें, धरशीश तंबूल चबाइ लयो ॥
कर जोर गयो गुरुकेढिगते, मन भीतरसो सवधान भयो॥
गुरु पूरणतें पदकंजलहे, इकपूछत तोहि संदेशनयो ॥१४३ ॥

---

१ वशकहिये मंत्रोषधियोंकरकैंही अन्यको वशकरना १ आकर्षण कहिये मंत्रोंषधियोंकरकैंही दूसरेको अपने पास खैंचिलेना।२ मोहनकहिये मंत्रोषधियोंकरकैपुरुषको भ्रांतिकी उत्पत्ति करनी ३ परमाथिन कहियें मंत्रोंषधियोंकरकै परकै मनको दधीकी-न्याई मथनकरना अथवा सकलज्ञानका नाशकरना ४ प्रक्षोभण कहिये मंत्रोषधियों करकै पुरुषके चित्तको विशेष क्षोभकरना ५ उच्चाटनकहिये मन्त्रोषधियोंकरकै स्वस्था-नसे पुरुषको भ्रष्टकरना ६ इत्यादिक प्राकृतासिद्धि कहीजावैहं। सोअर्थसे प्राप्तहोवैहं। २ अरे कापालिक। ३ अरे आचार्य। ४ थाले नाम थारे मस्तकमें अथवा थारे तुमार। अपाल कहिये अपार पलाकम कहिये पराक्रमहै।

जिमते मदिरा मम चीतहरे, गहिबेगसु भैरवके मतलयाए ॥
यह सिद्धि बडी निजनैनपिखी, तिम और कहों कछुहैनरपाए॥
युवती सुमनोहरपेख जबै, गुरुजो तव सेवक चीत लुभाए ॥
वहुआनसको किनहीजगमें, इहसंक बडीगुरुदेहु मिटाए १४४

कपालक उवाच ॥

दोहा।

पूछत कहा विशेष पुन, सकल बखानो तोहि ॥
विद्यावल सभको हरों, ढील नलागत मोहि ॥१४५॥
बिद्याधरी सुरंगना, सर्प यक्षनी नारि ॥
तीनभवन मनभावती, ल्यावों भौनमझार ॥ १४६ ॥

क्षपणक उवाच ॥

चौपाई।

मैं ज्योतिष पडियो बहुबारा। कीन गणत मम एहु निहारा ॥
हम सम महामोहके दासा। धर्मपंथ सभ करें बिनासा॥१४७॥

कपालक उवाच॥

चौपाई।

आयुषमान यथातव जान्यो। साँच अहै नहिं झूठ बखान्यो॥
क्षपणक कह्यो भूपको काज। करें विचार भले कछु आज॥
कपालक कह्यो कौनवहुकाज। क्षपणक कहें बतावहु आज ॥
शांतिसुता श्रद्धा है जोई। भूप कही गहिल्यावो सोई१४९॥
कपालक कहे सुकरो उचारि। दासी सुता कहा बहु नारि॥
विद्यावल मैं अबै दिखाऊ। ताको बेग केश गहिल्याऊ१५०॥
क्षपणक तब घरपटा सुआगे। लेकर नैपुन गणन सुलागे॥
शांति तबै पुन कीन बखान। करुणासखी सुनो दे कान१५१॥

१ शांतिहै सुता जिरूकी ऐसी जो श्रद्धा वा शांतिकहिये सत्वगुणकी सुता कहिये कन्या ऐसी या श्रद्धाहै। २ गालीप्रदानहै। ३ सिलेट। ४ पत्थरकीकलम।

यह हतआश सुकरैं बिचार । मम माताको नाम¹ उचार ॥
होइ इकागर सुनो प्यारी । करुणा कह्यो सुभली उचारी १५२

दोहा ।

ते दोनों ठाढी तहां, चीत इकागर धार ॥
कर गणती क्षपणक तबै, लागो करण उचार ॥ १५३ ॥

चौपाइ ।

नहिंजल नहिंथल नाहि पहारन । श्रद्धा नांहि सुमाहि पतारन॥
विष्णुभक्तिके संग मिलाइ । बसीमहात्मजनउरजाइ॥ १५४॥
करुणा सानंद कीन उचार । भलाभया सजनी सुनीसार ॥
श्रद्धा विष्णुभक्तिके पास । वसे महात्म उरसुखरास॥ १५५ ॥
सुनिकर शांति हर्ष उर भयो । बहुर कपालकबचनअलयो ॥
कामबिहीन धर्म पुन जोई । क्षपणक कहो कहा अब सोई ॥
क्षपणक अंकमालविसतारी । गणतीकर पुन कीन उचारी ॥
जल थल गिर पताल सोनाहीं । अहे महात्मके उरमाहीं १५७
कपालकसुनत बिखादहि भयो । मोहमहीप कष्ट अतिभयो ॥
देवी विष्णुभक्ति है जोई । सभसिद्धिनिकी मूल सुसोई ॥
शांतिसुता श्रद्धाहै जोई । ताहिसमीप बसी अब सोई ॥
कामविमुक्त धर्म तह जव हीं । बसेअनर्थ होइ हमतबहीं १५९॥
विवेकभूपके कार्य जेते । यद्यपि सिद्ध होइगे तेते ॥
तदपि महामोहको काज । करैं होइ जेतो कछुआज १६०॥
जाके लौन बहुतदिन खाए । ताहित मरे जगत जसपाए ॥
तातैं प्राण जाहिं तो जैये । स्वामिकाज बललायसुकैये ॥

१ निष्कामधर्म ।

महांभैरवी विद्या सार। अबी पठै ये होइ नबार ॥
श्रद्धाधर्म उभै हरिल्यावे। महात्मजनहु कुपंथ चलावै १६२॥

दोहा।

महामोहअनुचर सभै, गए अखाडो त्याग ॥
गुलाबसिंह अबशांति पुन, भाषतहै बडभाग ॥ १६३॥
मम माताके हरनहित, हताशन आश सुकीन ॥
विष्णुभक्तिको जाइ अब, कहिये सखी प्रवीन॥ १६४
इमकहि करुणा शांति पुन, भई सुअंतरध्यान ॥
कीरतिबरमा देव पिख, भयो शुभाशुभ ज्ञान॥ १६५॥

दोहा।

विष्णुभक्ति आगे सुनो, श्रद्धा रक्षा कीन ॥
बिवेकसमीप पठाइगी, होइ सकल अरि खीन॥ १६६

इति श्रीमन्मानसिंहचरणशिक्षितगुलाबसिंहविरचिते प्रबोधचन्द्रोदयनाटके पाखंडविडंबनो नाम तृतीयाऽङ्कः समाप्तः ॥ ३ ॥

---

१ महाभैरवीविद्या कहनेकर करटउपाय तिनोंने रचा। २ हताशन कहिये नष्ट होवै आशा जिनोंकी सो कहिये हताशन।

इति श्रीमदुदासीनवर्य परमानंद शिष्य गुरुप्रसादविरचिता प्रबोधचंद्रोदय नाटक तृतीयांऽकटिप्पणिका समाप्ता ॥ ३॥



ॐ श्रीगणेशाय नमः ।

अथ चतुर्थोऽङ्कप्रारंभः॥ ४॥

दोहा ।

पेखत जांतज मोहको, लहे प्रबोध उदार॥
सीतावर वरकल्पद्रुम, बसे सुचित्तमझार॥ १ ॥
कीरति वरमा देवकी, आई सभामझार ॥
मैत्री रूप निहारके, मिटे सुनिखल विकार ॥२॥

सवैया।

दृग नीलसरोरुह शोभितहैं, अलिके कच नील कपोल सुहाई
मुखचन्द अनन्द करे उरको, गति मंद मनोजन चित्तचुराई॥
कटिसूक्ष्म पीन नितंब कुचा, दृग लाजबड़ीनिरखे सुखदाई॥
कविसिंह गुलाब निहारसभा, नृपकीरतिवरमाकी विगसाई३॥

मैत्र्युवाच ॥

चौपाई।

मुदिता मोप्रति कीन बखान। मैं सुनियो सजनी निजकान॥
महाभैरवी घरणिगिराई। श्रद्धा विष्णुभक्तिसुबचाई ॥ ४ ॥
है उत्कंठा चीतमझारी। किहविधि पेखो सखी पियारी॥
ऐसे मैत्री भाष्यो जबहीं। प्रवेशकीयो श्रद्धातिह तबहीं॥५॥

श्रद्धोवाच ॥

दोहा ।

मै उर मै अतिडर भयो, काँपत मोहि शरीर ॥
महाभैरवी मै पिखी, धारत ना उरधीर ॥६ ॥

सवैया।

घोर महा बिकराल बडी, नरमूंड कपालन कुंडल पाए ॥
बिज्जुछटा तनकी द्युति है, दृगपेखनते जनु ज्वाल बमांए ॥
कच पिंग सुदाडहि चन्दकला, तिनभीतर दीरघजीभ हलाए ॥
समरंभदला तन कंपतमें, जनु नैन पिखो इमचीत डराए ७॥

दोहा।

मैत्री मनहि विचारकर. लागी करन बखान ॥
श्रद्धा व्याकुल अतिभई, होवत ना कछु भान ॥ ८॥

चौपाई।

एहु पियारी सखी हमारी। संभ्रमरिदेसुभई दुःखारी ॥
कदलीदलतन कंपत सारा। कछु मनभीतर करत विचारा९॥
याके सनमुख मै अबआई। लखै नमोहि नशुद्ध सुकाई ॥
याको मै अब बेग बुलाऊ। पूछो जाहि संदेह मिटाऊ॥१०॥

मैत्र्युवाच ॥

दोहा।

हेश्रद्धे प्यारी सखी , कहागयो मन तोहि ॥
मैं तेरे आगे खडी , नाहिनिहारत मोहि ॥ ११ ॥
श्रद्धा ताहि बिलोकिपुन,लांबो लीने श्वास ॥
सखी प्यारी मै डरी, आउ हमारे पास ॥ १२ ॥

१ अमलज्वालाको छोडतीहै। २ केशकपिशरंगवालेहैं।

चौपाई ।

कालनिशा सम बदन कराला । मैं ताभीतर ग्रसी बिहाला ॥
याहि जनमबिषे पुनप्यारी । तोहिपिष्योममभागउदारी १३॥
मैत्री सखीसु अंग मिलीजे । मेरे दुख दूर सभ कीजे ॥
तब मैत्री पुन अंग मिलानी । श्रद्धा लाइगले बिगसानी॥ १४॥

मैत्र्युवाच ॥

चौपाई ॥

महाघोर दरशन है जाहि । विष्णुभक्ति पुन डाट्यो ताहि ॥
महाभैरवी विपति मलीन । कहोसखीतिनकरमसुकीन॥ १५॥

श्रद्धोवाच ॥

सुनसजनी मै करों बखान। जैसे बाजपरे बलवान ॥
एकेहाथमै कच गहिलीने । दूसेर धर्मगह्यो दुःख दीने ॥ १६॥
लेकरदोनो गगन उडानी । मनो गीझ लेमांस पलानी ॥
मैत्री सुन उरमाहि डराई ।हा धृग हा धृग मुखोअलाई १७॥
भई मूरछा तनमै भारी । श्रद्धा बहुरों कीन उचारी ॥
सखी प्यारी डरु नहि करो ।तुम नीके उर धीरज धरो ॥ १८॥
मैत्री तबै धीर उर धार । श्रद्धे सखी सुकरो उचार ॥
श्रद्धा बहुरों कीन बखान । सुनो सखी नीके दे कान ॥१९॥
मै अतिआरत दीन पुकारी। विष्णुभक्ति उर दया सुधारी ॥
टेढीदृष्टि निहाऱ्यो जबहीं । गिरि भैरवी धरामै तबहीं॥२०॥
वज्रपातजिम शैल गिराई । जरजरअंग गिरी तिमआई ॥
विष्णुभक्ति उर बसे हमारे ।गुलाबसिंह सेवक प्रतिपारे॥२१॥

१ एकहाथसे मैंको केशोंसे गहिलिया । २ दूसरे हाथसे निष्कामधर्मको ।

मैत्र्युवाच ॥

दोहा।

भलाभया जीवत सखी,आज निहारियो तोहि ॥
मनो मृगी शरदूलमुख, छुटी बहुर कहुमोहि॥२२॥

श्रद्धोवाच॥

चौपाई।

देवी विष्णुभक्ति उर भारी। भई क्रोधमुख एहु उचारी ॥
महामोह दुष्टात्म जोई। हनो समूल रहे नहिं सोई२३॥
मोहि अविद्यां ताहि कराई। श्रद्धा केशनते सुफराई ॥
ऐसेकहि मुहिकियो बखान। श्रद्धे बेगसु करो पियान २४॥
बहुर विवेकसमीप सुजाई। काम क्रोध मोह दुखदाई ॥
तिनजीतनहित सैनमिलाई। हुइ वैरागसु तोहि सहाई॥२५॥

दोहा।

प्राणायाम सुसंगमिल, मैं आवों ततकाल ॥
कृपा करों तव सैनपर, करों सुजंग बिसाल॥ २६ ॥

चौपाई।

ऋतंभरादि प्रज्ञा हैजेती। शमदमादि सगली मिलतेती ॥
प्रबोधपूतहित देव मनाए। कब विवेक उपनिषत मिलाए२७

दोहा।

तातैं तूं उपनिषत संग, मिल विवेकसुत मोर ॥
मम आयसुप्रबोधसुत, होवेगो ग्रह तोर॥ २८ ॥

---

१ व्याघ्रमुखसे। २ महाभैरवीसे मेरा तिरस्कार करायाहै। ३ ऋतं सत्यं भरति बिभर्ति सा ऋतंभरा प्रज्ञा अर्थयह- ऋतकहिये सत्य अर्थकूं जो धारणकरनेवाली वृत्तिहै ताका नाम ऋतंभरा प्रज्ञाहै।

चौपाई।

मैत्रीमैं विवेक ढिगजाऊ। विष्णुभक्ति संदेश सुनाऊ ॥
बासर तूं किहभांति बिताए। कौन कौन आचरन कमाए२९

मैत्र्युवाच ॥

दोहा।

विष्णुभक्तिकीआज्ञया, चार बाहिन हमनीत ॥
विवेक काजके सिद्धहित, वसें महात्मा चीत॥३० ॥

चौपाई।

महात्मजन जगभीतर जेते। या बिध वरतें सगले तेते ॥
सुखियनमैं जनमैं उरधरें। दुःखियनमैं करुणा उरकरें३१॥
पुंनवंतमै मुदिता धरें। दुष्टनमाहि उपेक्षा करें ॥
योंकर रागद्वेष कलषाई। मिटे निजात्मकी सुमलाई॥३२॥

दोहा।

मैत्री करुणा मुदित, और उपेक्षा जान ॥
चार बहिन हम जीवकी, करें सकल मलहान ॥३३॥
चली प्यारी सखी तूं, महाराजके पास ॥
कहां निहारे भूपको, मोहि करो प्रकास ॥ ३४ ॥

---

१ तथाच सूत्रं मैत्री करुणा मुदितोपेक्षाणां सुखदुःखपुंण्याऽपुण्यविषयाणां भावनातः चित्तप्रसादनम् अर्थयह–सुखी दुःखी पुण्यात्मा पापात्मा पुरुषोंविषयक यथाक्रमसे मित्रता दया मुदिता उपेक्षा इनधर्मोंकी भावनाके अनुष्ठानसे चित्तको प्रसन्नकहिये निर्मलकरे अर्थात् जे पुरुषसुखीहैं तिनमें मैत्रीकी भावना करे जे दुःखीहैं उनपर कृपा-की भावना करे जे पुण्यशीलप्राणी हैं उनमें मुदिताकी भावनाकरे जे पापाचारहैं उनमें उपेक्षाकी भावनाकरें अर्थात् उनके सङ्गउदासीनभावसें वर्ते, इस प्रकार धर्मोंकी भावनासें (चिन्तनसे)चित्तकेरागद्वेषादिक मल दूरहोवै हैं इति।

श्रद्धोवाच ॥

चौपाई ।

विष्णुभक्ति देवीहै जोई । कहीठौर सुनिये अब सोई ॥
राढा नाम देश इक गाए । महापुनीत जहां बनछाये ॥३५॥

दोहा ।

तिह उत्तरतट गंगके, चक्रतीरथ महान ॥
मनो विधाता गंगश्रुत, रचे तटके सुजान ॥ ३६ ॥

चौपाई ।

तहां विवेक बसे बडभागी । मीमांसामै जिनकी मतिलागी ॥
किवैंकिवै धारे निजप्राना । भये व्याकुलचीत महाना ॥३७॥
धमनी व्याततां तनुभयो । उपनिषत संगहित तप निरमयो ॥
परशुरामसम धार सुटेक । करे तपस्या तहां विवेक ॥ ३८ ॥

दोहा ।

कह मैत्री अब जाहि तूं, श्रद्धे बेर नहोइ ॥
विष्णुभक्ति जो मम कह्यो, कर नियोगहै सोइ ॥३९॥
इमकहि दोनो चलीतब, श्रद्धामैत्री जान ॥
अपने अपने पंथमै, बन्दनकर भगवान ॥४० ॥

चौपाई ।

श्रद्धा जायबिबेक निहारा । धमनी व्याप्ततांतनुसारा ॥
तातजीत अरिमुखो अलायो । पिख विवेक पदमोलझुकायो ४१
श्रद्धा कर गहि लयो उठाइ । पूछो कुशल नैन जलजाइ ॥
विष्णुभक्ति मुख कीनबखान सुनोपूत नीके दे कान ॥४२॥

१ करणफूल । २ नाडी ।

कामक्रोध पुन मोह अराती । करो पूत इनको तुम घाती ॥
सुन विवेक मुख एहु उचारी । हनोअरातिसहायतुमारी॥४३॥
याअवसर इक मंत्री आयो । नामसुबुद्धि रूप मन भायो ॥
मंत्री आइ सुबन्दन कीनो । भूपविवेकसु आदर दीनो४४ ॥
समाचार सभ भूप सुनायो। सुन मंत्री मनमें हरषायो ॥
देव करो तुम बेग उपाइ । जीते निखल अरातीजाइ ४५॥

दोहा।

सभामाहि उरहरष अति, अए बिवेकसुराय ॥
जा पदकंज प्रतापते, निखल शोक मिटिजाइ ॥ ४६ ॥

सवैया।

सूर्यसों तनु शोभितहै, भुजदंड मनो ब्रह्मांड दबाए ॥
नैन सरोज मनोज हने, सुप्रताप दशोंदिशमें चमकाए ॥
धरणीसम धैर्यहै उरमें, मुखमेघनश्रावणसों गरजाए ॥
भूप निहारसमेतसभा, कविसिंह गुलाब बडे हरषाए॥ ४७॥

राजोवाच ॥

दोहा।

हापापी महामोह शठ, हने महांजन तोहि ॥
मै तेंप्राण निकारहों, विष्णुभक्ति[१] कहि मोहि ॥ ४८ ॥

चौपाई।

शांति अनंतमहिमा उजागर । चिदानंद अंमृत सुखसागर ॥
मगनभयो तामे इकबारा । वहुनरचहे न सुखसंसारा ॥४९॥

---

१ विष्णुभक्तिका ।

मृगतृष्णा जलहै [१]निहसार । याबिधको सागर संसार ॥
मूरख ताहिकरे अचमान । कै चित ताहि करे मुखपान ५० ॥

दोहा ।

करअवगाहनरमे तिह, अरध उरध पुनजाइ ॥
गुलाबसिंह बिनबोधजग, सदा परमदुःखपाइ ॥ ५१ ॥

चौपाई ।

अथवा यह चक्रसंसार । महामोह तिह प्रेरनहार ॥
ताको मूल अबोध विचाऱ्यो । तत्त्वबोधकरबनेनिवाऱ्यो ॥ ५२ ॥
ईशअराधन बीजते, उपजे तत्त्व सुबोध ॥
ताबिन और उपाइ नहिं, हम देख्यो अति सोध ॥ ५३ ॥

चौपाई ।

पुंनवंत जे करे उपाइ । करें देवता ताहि सहाइ ॥
ऐसे तत्त्व विवेकी कहैं । जनके सर्वसंदेहसुदहैं ॥ ५४ ॥
विष्णुभक्तिममआयसुकीनी । श्रद्धा आनि मोहि कहिदीनी ॥
कामादिक जीतन उपाइ । करोसिताब सुवारनलाइ ॥ ५५ ॥
मैभी करो सहाय तथारी । यों हरिभक्ति सुकीन उचारी ॥
वस्तु विचार अहे जगजोई । कामजिने क्षणभीतर सोई ॥ ५६ ॥
ताते ताको बेग बुलैये । तांजीतनहित ताहि पठैये ॥
वेत्रवती अब बेगसु जाई । ल्यावोवस्तुविचारबुलाई ॥ ५७ ॥

---

१ श्लोक-प्रायः सुकृतिनामर्थे देवा यान्ति सहायताम् । अपन्थानं तु गच्छन्तं सोदरोऽपि विमुञ्चति । अर्थ यहः-पुण्यात्मा पुरुषोंके अर्थ देवताभी प्रायःकर सहायताको करतेहैं परंतुकुमार्गगमनकरतेहुए पुरुषको सोदरकहियेसाथ उत्पन्नभ्राताभीत्यागकरदेवे है ।

प्रतिहारी तब बेगसिधाई। देव कह्यो सुकरों अबजाई॥
वस्तुविचार संग प्रतिहारी। आई बेगसु सभामझारी॥५८॥

वस्तुविचार उवाच॥

छप्पयछन्द।

बिनसुंदरतनु सुंदर पापी मदन दिखाए॥
करे बंचना जगतलोकको नरकि लिजाए॥
अथवा सभदुःखमूल दुष्टमैल्योबिचारी॥
महामोह जग अहे जगतमै बडो बिकारी॥
पुन जिहबिध मोहनिलाज सठ जनउरको भ्रमनाकरे॥
संग मदनमिल दुष्ट यह अबसोप्रकारजनमनधरे॥५९॥

सवैया।

यह कामनि कुंचतहै अलिका, दृगकंजपिखे जन चीत चुराए॥
घन पीन उतंग पयोधरहैं, मुखचन्द मनो छुबिरंचि बनाए॥
इहभांति सराहकरे जन मूरख, जांडर तीर अनंग लगाए॥
मलमूत्र सुहाडतुचा पुतली, युवती खलमोह सुयोंदरसाए६०॥
वस्तुविचार करेनर जो, तिहको युवती इमदेत दिखाई॥
मलमांसकीचिकडसंग बिरंच, सुहाडनकी पुतली सुबनाई॥
मुखथूक सुनाकमै सीढभरी, निसबासर नयनन गीड बहाई॥
दुरगंधमलीन सुनारि मनो, खिरकी यमधाम बिरंचलगाई६१

सवैया।

रमणी[1] रमणी नह रंचकहै, गुण औरनके रमणी दरसाए॥
मुक्ताहलहारसुहेमतटंक[2]ह, कुंकमचन्दनलेप लगाए॥

१ रमणी कहिये स्त्री रमणी नहीं कहिये सुंदर नहीं है किंतु और गुणोंके आरोपसे सुन्दर देखनेमें आतीहैसो गुणकौनहैं। २ करणफूल।

बहु फूलनकी गलमाल धरे, पुन पाट दुकूल शरीर सुहाए ॥
गति मंद हरे मन नारि नही, नरकाऽग्निचंडशिषाचमकाए६२॥
जिह भूषन नारिनके झनकार, सुनें मनहेरनको अकुलाए ॥
बिनभाग तिसे सुबिपत्ति परे, कंनके हितसो पुन कानन जाए॥
मलिनांबर सूपधरे सिरपै, पिठरी पुनश्यामकरे लटकाए ॥
निश आवत हेर बजारविषे, कविसिंह गुलाबनकोउलुभाए६३

दोहा ।

पापी काम चंडाल तूं, जो उर करैं मलान ॥
तौ व्याकुल जन होतहै, ऐसे करे बखान॥ ६४ ॥

सवैया ।

यह कामनि मोहि चितारतहै, पुन चन्दमुखी सुअनंद निहारे॥
दृग नीलसरोज सुपीन कुचा, सुअलिंगनके हित उदम धारे ॥
सठ कौनचहे तव कौनपिखे, युवती मलहाड सुमांसबिकारे॥
सुपुमान अमूरति चेतनजो, तव हेरत मूढ नही तवसारे॥६५॥

प्रतिहार्युवाच ॥

सवैया ।

इत आवहु हेबडभागसुनो, तब दोन चले पग बेग उठाए ॥
इह राजनको अधिराजविवेक, समीप चलो तुम बेर मिटाए ॥
तब जाइ समीप बिचार कह्यो, जय देवनदेव बडे सुखदाए ॥
करुणाकरके इतओर पिखो, यह वस्तुबिचार लगे तव पाए ६६

१ शिलाउच्छ । २ स्त्री हाडमांसका विकार होनेकर जड है, तिसमें इच्छादिकसंभवेनहीं तथापि स्त्रीमें जो पुमान् पुरुष अमूर्तचेतनहै सो तेरेको देखता है रे मूढ तेरेमें सार कछु नहीं यह भावहै ।

सवैया।

सुविवेक कह्यो यहठौर निवास, करो श्रम आपन दूर निवारो ॥
वस्तुबिचार सुबैठगयो, पुन जोर दोऊकर कीन उचारो ॥
यह किंकरदेव समीपअयो, करुणाकरके कछु आयसुधारो ॥
सुबिवेक कह्यो महामोहके संग, सुहोवतहे जगजंग हमारो ६७॥

सवैया।

मोहबली सुपताकनमै, प्रथमै सिरदार सुकाम बनायो ॥
ता प्रतिवीर सुसैननमै, हमरे मनमै इक तूं जग आयो ॥
मम धंनबिचारकह्यो सुखते, भट कोटिनमै प्रभु मोहि बुलायो॥
मार करों सभखंड मनो जह, जंबुकपुंज सुखाइ अघायो ६८॥

राजोवाच॥

दोहा।

वस्तुविचार उदार, अति शस्त्रविद्या कौन ॥
जांकर हने मनोज रण, मोहि बतावो तौन ॥ ६९ ॥

विस्तुविचार उवाच ॥

दोहा।

अहो पंचसर हाथमै, फूलनको धनु आहि ॥
तांजीतनहित शस्त्रकी, ग्रहण अपेक्षा नाहि॥७०॥

सवैया।

गढ देह[1] मनोजके द्वारजिते, दृढ रोक करों तिह व्याकुलभारी॥
निजराखनहेत चिते अबला पुन, दूरहितेज्ञु पिखेवहुनारी ॥
तव मैं परिणामसुदूषकहों, मलमूत भरीसु दिखावहु सारी ॥
इहभांति मनोजकरों बलखीण, सुलेवहुतां क्षणभीतरमारी७१॥

१ शरीररूपकिलेके भीतर कामके आनेजानेकेलिये इंद्रियरूपी द्वार है।

दोहा।

साधुसाधु भूपति कह्यो, बोल्यो बहुर विचार ॥
जिहबिध जीतों कामअरि, राजन सुनो प्रकार॥७२॥

सवैया।

पावनहै सरिता जगमै, घन कानन तीरबिषे अतिछाए ॥
कोमल सैल सिलातलहै, गिरिवास इकंत महासुख दाए ॥
जोसंमवाक व्यासकथा, सत्संगतिभाग बडे जनपाए ॥
तौंकहि नारि मलीनहरेमन, और मनोज कहा उपचाए॥७३॥
कामको आयुध एक प्रधान, इहै अबला जगभीतर गायो ॥
ताहि जिते पुन कामसहायक, उदम होवहिगो बिफलायो ॥
भंग करों जब कामसहायक, तौ यहप्राणतजेदुखदायो ॥
कामसहायक जे जगमै, तिहनाम कहों सुसुनो मनलायो॥७४॥
चन्द सुचन्दन धौलखिपा. मधुपावली गुंजतफूल सुहाई ॥
बागबसंत मयूर पिको पुन, श्यामघटा घन घोर लगाई ॥
मंद सुगंध कदंब प्रभंजल, और शृंगारजु कामसहाई ॥
नारि जिती तब जितलए, सभ नाहिपिखौइनतैवलराई॥७५॥

दोहा।

अति बिलंब नकीजिये, सुनो जगतके राय ॥
आयुस मोको दीजिये, हनो काम रण जाय ॥७६॥

सवैया।

सार असार विचार सिलीमुख, मैसुदशो दिशमाहि पसारे ॥
सैन मथौं अरिमंडलकी, सुवने प्रभुके अब कारज सारे ॥

१ व्यासप्रणीत शांति केप्रतिपादिक वाक्यहै तथा सत्सङ्गति। २ रात्रि।

कुरुसैन विमंथ्यसखाहरिके जिम सिन्धुपती रणभीतर मारे॥
कामकलंक हनोतिमही, प्रभु आयसुदेहुनलाइ सुवारे ॥७७॥

सवैया।

परनारिरमे अपवाद घनो , सिर दंडसहे यमलोक गहेगो ॥
निजनारिमिले अनुकूल कहां, कछुदोष सुने उरमाहि दहेगो ॥
बिनपूत महादुख चीतदहे, खलपूतभये भवधार बहेगो ॥
निपजे दुहिता घरमाहि घनी, धंननाहिमिले दुख लाजगहेगो॥
याबिध नारिनको सुखजो, क्षणएक भजे दुःख देवत भारी ॥
नारिन संगमते जन मूरख, घोरसंसार बहे बहु बारी ॥
धृगहै तिनको कछु पाइ विवेकजु, प्रीतिकरें पुन नारमझारी९
कविसिंह गुलाबनहीनरते जग, साचकहों बहु नारि बिगारी ७॥
सुन भूप विवेक प्रसन्नभयो, मुख भीतर यों तिन कीन उचारी॥
पटको कटिभीतर खैंच कसो, सभ आयुध बीर सुलेहु सभारी॥
अब शत्रु सुजीतनहेतु चढो, सुकरे शिव आप सहाय तथारी ॥
वस्तुविचार कह्यो जिम आयसु डुंदभवाइचढे बलधारी ॥८०॥
तब भूपति फेर विचारकह्यो, सुन वेत्रवती सुभले मनलाए ॥
अब क्रोधके जीतनहेतु सुपावन, एक क्षमा तुम लेहु बुलाए॥
प्रतिहारनि फेरकह्यो बिनबेर, करों प्रभुजो मुखमाहिं अलाए॥
वहुजाइ सिताब अई क्षणमै, सुक्षमा पुनआपनसाथलवाए॥८१॥

सवैया।

अतिसुंदर चीतगंभीर बडी, दृगलाजभरे घर ओर निहारे ॥
इहभांतिलसे मुखमंडसतां; नभकातक चन्दकला सभधारे ॥

१ अर्जुन। २ जयद्रथ। ३ कन्या। ४ दुपटा।

अतिपावन दीरघ हेर कवि जन, सिंच सुधा उरताप निवारे ॥
इहभांतिक्षमासभलोकपिखी, अबआपक्षमा मुखमाहिउचारे८२

क्षमोवाच ॥

कवित्त।

क्रोध अंधकारके विकार उर भये अति,
भ्रुकुटी चढाइखल फीके मुख बोलई ॥
नैनकरे लाल सुबिसाल होठ डसे अति,
जरे अंगअग सुभुजंग बिषघोलई ॥
धीरजे गंभीरनीर सागरसमान अति,
भजे न बिकार नहि रंच उर डोलई ॥
क्षमावंत संत भगवंतके महंत जन,
बोले मधुबैन जन अमी झकझोलई ॥ ८३ ॥
खेद न जवानको न शीसको महानदुःख,
चित्तको न ताप नहि देह दुःख पाइहै ॥
हिंसादिदोष बिन क्रोधको निफोट हनो,
क्षमा मेरो नाम जग मेरो जस गाइहै ॥
ऐसैतु अलाइ पुन दोनही समीपजाइ,
कहे प्रतिहारी क्षमा और समुझाइहै,
यही देवदेव सुबिवेक भूप भारी अति,
चलिये समीप सखी पेखि हरषाइहै ॥ ८४ ॥

दोहा।

क्षमा समीप सुजाइ, पुन जयजय देव उचार ॥
यह दासी आई क्षमा, बन्दों पाद तिहार ॥ ८५ ॥

१ अत्यन्त।

सवैया।

सुक्षमा इहठौर निवासकरो पुन, बैठ क्षमा यहबात प्रकासी
प्रभु आयुसु देहु बिलंब कहा, जिहहेतु बुलाइलई यह दासी॥
सुक्षमे यह संगरमाहि दुरात्म, क्रोध बडो सुभपंथ विनासी॥
भट औरनको मुखजोरत हैं,सुक्षमेअबताहि करोतुमनासी॥

दोहा।

देव अनुग्रह पाइ तव, महा मोह रणनास॥
मैसुकरो क्षण एकमै, कहा क्रोध तिह दास॥ ८७॥

सवैया।

इह वेदन पाठ सुयज्ञतपो पुन, और जिते नर पुंन सवारे॥
बिन कारण वैरकरे दुष्टात्म, क्रोध सभो शुभपंथ निवारे॥
सम लोह सुदेह तपावतहैं पुन, नैननते जन आगि निकारे॥
तिह क्रोधको मैंइहभांति हनो,दुरगा माहिषासुरज्योंरणमारे॥

दोहा।

बहुर विवेक बखानियो, क्षमे सुने हम कान॥
जांउपाय क्रोधहि जने, वहु मम प्रगट बखान॥८९॥

सवैया।

सुक्षमा कहि देव सुनो मनमैं,नर क्रोधकरेतब मौन गहीजे॥
वहि गारिबके मुखभीतरजो,पुन तांप्रति कोमलवाकभनीजे॥
जुधिकारकरे परेतिहपांइ आपद, पेख महा करुणा उरकीजे॥
तनताडनमै हरषै उरमै, कृतपूर्वपाप सुमेअब खीजे॥ ९०॥

इहभांति विचाकरे निसबासर, ताहि सुक्रोध नहीं उपजाए ॥
तब भूप शबासकही मुखते, सुक्षमे तव भाख्यो साच उपाए ॥
सुन देव जिते जब क्रोध बली, तव हिंसन पारुष मान बसाए॥
सभ जीतलए नहिं फेरलरें, इनकी भुज ना बल देतदिखाए९१॥

दोहा ।

कह्यो विवेक प्यानकर; रणमै शत्रु संहार ॥
सात्विक संपति देवियां, करें सहाय तथार ॥ ९२ ॥
क्षमा सुआयसु सीसधर, गई सुशंखबजाइ ॥
राजा प्रतिहारी कह्यो, लेहु संतोष बुलाइ ॥ ९३ ॥
महामोहभट लोभजो, ताको मारेसोइ ॥
तांबिन प्रतिहारी सुनो, और उपाव न कोइ ॥ ९४ ॥
जो आयसु सोई करों, प्रतिहारी इम जाइ ॥
ले संतोषको संग पुन, कीन प्रवेश सुआइ ॥९५ ॥
चित्त चितार सन्तोष पुन, दयारसीले नैन ॥
गुलाबसिंह वहुबोलियो, सुनो ताहिके बैन ॥ ९६ ॥

सन्तोष उवाच ॥

सवैया ।

फल काननमांहि अनेक मिलें, विनखेद सदा तरुहै सुखदाई ॥
पुन नीर जहांतहं पूर रह्यौ, अतिशीतल पुंन नदी मधुराई ॥
मृदुसुंदर पल्लवसेज बने, बिजनाबन आप समीर झुलाई ॥
जन हा धनवंतनद्वारनमै, कृपण पुन खेद सहैं बहु जाई ॥९७ ॥

---

१ हिंसा, कठोरवचन वा कटुवचन मान वा प्रभुता अधीन होवैहै ।

जन मूरख ना मम चीतधरें, अतिमोहभये सठ देह तपाए ॥
बहुवार अरंभ भये भगना, जग फेर करे पशु नाहिं लजाए ॥
जिमकालरनीरभ्रमे हरणा, इतते उत मूरख त्यों जगधाए ॥
विन मोहिप्रसादन आशमिटे, हतबज्रसमान घनो बिललाए९८

कवित्त।

लोभ अंधकार दृग याबिध बिकारभजे,
पांउ धन और कछु एतो अब पायोहै ॥
एतो थापराषों एतो ब्याजमै चलाऊं आगे,
मे पिता पितामेपुन याबिध बढायोहै ॥
ऐसै धनध्यानकरे काळकी नसारपरे,
आश सुपिसाची पुन याबिध ग्रसायो हैं ॥
बिन सन्तोष जग लहे घनो दोष पुन,
गहे काल मूंड जाने लोक सुख पायो है॥ ९९ ॥

सवैया।

धन एक उपाएकरे नलहें, पुन एक बडे सुउपाइ मिलाए ॥
जु मिलाइ घरे धनभौन विषे, बिनभाग सुभोगविना बिनसाए॥
तुल्य वियोग उभै धनको घर, आइगयो बहु चित्त तपाए ॥
याजगमाहि सन्तोष बिना, कवि सिंहगुलाबनको तृप्ताए १००॥
केश सुधौल भये शिरके, सुजरा जगसापिन डंक लगाए ॥
तदपिमूढ चहे धनको, सुख हेतु कवी नहि रामको ध्याए ॥

---

१ संयोगवियोग।

बोधसुनीर अबोधजनी रज, लोभ भले जगमाहि मिटाए॥
सन्तोष रसामृत सिंधुविषे पुन, देहुबकी सुई पूरणपाए१०१ ॥

प्रतिहार्युवाच ॥

दोहा।

एहु स्वामी भूपहै, चलो सुयाके पास ॥
जाय सन्तोष समीप पुन, जयजय कीन प्रकास१०२॥
इहु सन्तोष प्रणाम प्रभु, करे सुचरण तिहार ॥
भूपति कह्यो समीप इह, बैठो आउ हमार ॥ १०३ ॥

कविरुवाच ॥

बरनो रूपसन्तोषको, बैठोसभामझार ॥
सीतावर वर मैं चहों, बसो सुचित्तमझार ॥ १०४ ॥

सवैया।

चित गंभिर मनोनिधि नीर, शरीर महाद्युति सोहतहै ॥
दृग सिंच सुधारस शांतिकरे, इहभांति चहूंदिश जोहतहै ॥
निज दौरदलै अरिमंडलको, भवमंडलमैं यश सोहतहै ॥
कविसिंहगुलाब पिखे इहभांति,मनो सभके मन मोहतहै१०५

दोहा।

बहुर सन्तोष बखान्यो, आज्ञा देहु सुमोहि ॥
भूपति कह्यो प्रसंग सभ, नाहि सुछानोतोहि ॥१०६॥
बेगबनारस जाहुअब, लोभहनो बलधार ॥
कह्यो सन्तोष सुकरोअब,जो प्रभुकरो उचार ॥१०७॥

---

१ ज्ञानरूपी जलकरके अज्ञान बहुललोभकर उत्पन्न रजोगुणको धोयकर।

सवैया ।

मानव, देव सुदैतसभै, जिह जीतलए जगभीतर सारे ॥
तापसमंडल विप्र हने, बहुभांतिनके पद संगल डारे ॥
तां खललोभको मैं इहभांति, हनो पुन संगर भूमिमझारे ॥
दाशरथीरघुवीरबलीजिह, भांतिसुरावणराक्षसमारे ॥१०८॥

चौपाई ।

ऐस बखान सन्तोष सुगयो । और एक नर आवत भयो ॥
देव विजयहित मंगलजेते । सभमिलाइ लियाए तेते॥१०९॥

दोहा ।

तरुण ज्योतिषि आइ कर, कहे महूरत सार ॥
प्रस्थान भले अब कीजिये, विजयमहूरत धार ॥११०॥
भूपति पुरुष बखान्यो, सैनापती बुलाइ ॥
कहु प्रस्थान अब कीजिये, शिवसुतपादमनाइ १११ ॥
कहो सारथी जाइ अब, संग्रामक रथ आन ॥
कृतमंगल रथ बैठकर, बेग सुकरें पयान ॥ ११२ ॥

सवैया ।

भूपकि आयसु जाइकही, सरदारनसों नहबेर लगाई ॥
सूत स्यंदन बेगअने रथ, भूपचढे सुगणेश मनाई ॥
ताहिसमै सरदार सभैचढ, वाहनसैन अशेष चलाई ॥
धुनिदुंदभकीजरजल्लभयो, सुप्रलेघनजानगरजेनभआई ११३
मत्तगयंदन कोर सजी, भ्रमरावलीगंडनमाहि सुहाई ॥
जान सपक्ष चले गिरिपुंज, सुबेग बडो अवनी गजछाई ॥

(१) कन्यादर्शनदध्यादि । २ संग्राममें योग्य ।

कांचनके झुलवार[1] लसें, गजश्याम भली उपमा मनआई ॥
दामनिपुंज सुसंगमनो, निस भादवकी घटहैं उमडाई ११४॥
श्वेतवरूथ[2] सुऊच बडे, घनसारदसें[3] रथपुंज सुहाए ॥
वेग प्रभंजन जीत तजे, इहभांति तुरंगम स्यन्दन लाए॥
ते रणरंगमही अति धावत, ता उपमा कवि कौन बताए ॥
धावनमै मन एक बली, कविसिंहगुलाब सुहैर लजाए११५॥

सवैया।

पैदलके[4] बहु पुंज चले, रणमै सभके उमगे मनहै ॥
फेटनमै[5] यमदाड कसी, सणखोलसंजोह[6] सजे तनहै ॥
कुंत[7] सुदीरघहै करमै सुगुलाब कछू उपमा भनहै ॥
जान दिगंतर[8] भूरखिरे, यह नीलसरोजनके बनहैं ॥११६॥
कोटन कोटि सुबीर बली पुन, मांहि तुरंग अरूढ भयेहैं ॥
मानहु भूमिनपाइ छुहे, नभमैं हरिबाहन कोटिधएहै ॥
थर थल्लभयो दिगमंडलमैं, कर बीजुछटा करवार लएहै ॥
यों चतुरंगन सैन चली, सभके तनमै अति रूप नएहै ११७॥
मध्यविराजत भूपतिको रथ, मानहु मेरुइसो चमकाए ॥
वाजि खुदागर चुंबत भूमि, सुले रथमाहि अकाश उडाए ॥
योंधुनि होवतहै रथकी जनु, खीरनिधी हरि फेर मथाए ॥
धूरिकीपुंज अकाशचढे, पथऊर्ध्वहै रवि मंडल छाए॥११८॥

---

१ झूल। २ उच्छाड। ३ शरदऋतुके वादलसें। ४ प्यादोंके। ५ कटिवस्त्रमें कटारी कसीहै। ६ टोपसहित कवच। ७ नेजा। ८ दिशायोंके अंतर।

सूत उवाच ॥

कवित्त।

राजनके राई सुनजीकआई एहु पिखो,
शिवकी बनारस सुदेत यों दिखाई है ॥
नीरयंत्रधार सुफुहारे जहँ अपार छुटे,
पावनी बनारसकी भूमि सुसुहाई है ॥
सौधनके शीश जन रचे जगदीश तह,
कांचन बनाइ लिपलेप चमकाई है ॥
जाहिकी अपार छबि हेर छबि छीनभई,
कहि सुगुलाबचन्द किरणन लजाईहै ॥ ११९ ॥

सवैया।

[१]धौल पिखो ग्रह ऊच बने, ज[२]नुसारदमैंघन पुंज सुहाए ॥
बीच पताक सुऊच लसे, मुमनो तडतागनकै चमकाए ॥
है मु[३]कलाकृत वारजपुंज, सुगुंजततां मधुपावलि आए ॥
गंधकरे उदगार मुखो, मकरंदभयो झडसूर छपाए ॥ १२० ॥
फूल खिरे सुचुफेर पिखो, यह पावन भूमिसमीप सुहाई ॥
एहु पिखो घन छायमही, तरुपुंज किधो घटहैं उमडाई ॥
मारुत जाइ सुठौरविषे, जन पूजत शंभुप्रेम बढाई ॥
गाँ[४]वत फूल चढावतहै सुनिवावत बन्दत शीश निवाई१२१॥

१ मन्दिरोंके शिखर। २ सुफेद। ३ मुक्तामणिके किये। ४ वायुके संबन्धकर जो वृक्षोंका शब्द है तिसशब्दकर वायु मानो गावत कहिये शिवका जाप करे है और अपने आपसे जो वृक्षोंसे फूल गिरतेहैं सोई मानो शिबजीकोवायु फूल चढावताहै और निवावत कहिये वृक्षोंको अपने बलसें वायु भूमिमें स्पर्श करावेहै तिस बहानेकरमानो शिवजीको वायु बन्दना करेहै।

आरद्र[1] गंगको नीर करे पुन, फूलपराग सुगंध चढाए ॥
गुंजत बीच सुभ्रंग फिरें, मिसताहि मनो शिवगीत[2] सुनाए ॥
तरुलंबलता अति नाचतहैं; सुमनोभुजदंडनभाव दिखाए ॥
सारस हंस चकोर धुनी मिस, वायुमनो शिवपाठ[3] सुनाए १२२॥

दोहा ।

पिख अनंद भूपति भयो , लागो करन उचार ॥
यह शिवनगरी पावनी, मुक्तिकरे संसार ॥ १२३ ॥

सवैया ।

तम हारद[4] दूरकरे क्षणमैं, पुन आनंद आतममैं उपजाए ॥
विधुमोलपुरी मन अँचतहै, सुमनो पद[5] मोक्षहि ज्ञान लजाए॥
जिह ठौरबिषे यह गंगभले, अति वक्रभई इहभांति सुहाए ॥
जन हासकरे यह चन्दकला सुकिधोंधर मोतिनहार सुपाए १२४

सोरठ ।

रथते उतर सुसूत, दई प्रकरमाभूपकी ॥
पिख बिबेकपुरुहूत, दीरघ आयुबिसालमती॥ १२५॥

सवैया ।

गंगक तीर सुधीर महामति, मंदरऊच सुमेर सुहाए ॥
आदिनारायण केशवको, यह पावन थान महातम गाए ॥
भूप निहार अनंदभयो, मुखभीतरते यह वाक अलाए ॥
क्षेत्र[6]कुंआतम एहुसुनो, सुपुराविद पंडित मोहि बताए॥ १२४६॥

---

१ गंगाकेनीरसेंस्नान करके । २ तालस्वरतानादि । ३ स्तोत्रपाठ अन्य सुगम है। ४ हृदयगततम। ५ काशी मानो मोक्षका पद कहिये कारण है। ६ क्षेत्रमेंहिमाके जानने-वाले व्यासादिकोंमे पूर्व हमको क्षेत्राऽभिमानिदेवता केशव भगवान् कहाहै ।

दोहा ।

यांहिठौर तज देहकौ, मिले परात्म जाइ ॥
पुनवंत जन लोकमैं, लहैं मरण इह आइ ॥ १२७ ॥

सूत उवाच ॥

दोहा ।

कामक्रोध पुन लोभलौ, भूपति हमे निहार ॥
देखो दूर पलातहैं, ज्योंकातर असिधार ॥ १२८ ॥
भूपति कह्यो प्रसाद हरि, सर्वसिद्धि जगहोइ ॥
कर प्रवेश भगवानके, मैं बन्दो पद दोइ ॥ १२९ ॥
रथते उतर प्रवेशकर, भूपति भले निहार ॥
भगवन भक्त कलेशहर, जयजय सदा तिहार ॥ १३० ॥

विवेक उवाच ॥

भुजंग प्रयात छन्द ।

सुरंचक्रैचूडामणीदीपजागे ॥
करैं आरती पादकंज सभागे ॥
नखं जोतिशोभा लसे हेम पीठे ॥
मनो कोटिखद्योत चांदे सुदीठे ॥ १३१ ॥
भैवं द्वैत संभ्रांतिसंतानिताए ॥
तुमे द्वैत मेटो करो बोधछाए ॥
क्षमामंडलों धार संभार पीने ॥
लगी दाड कोटी गिरी चूरकीने ॥ १३२ ॥

---

१ काशीक्षेत्रमें । २ सुरमण्डल । ३ कोटखद्योतहीस्ववर्णविंदुकी न्यांईदेखीतेहैं, ४ संसारभेद भ्रांतिकी परंपराकर जो संतप्त है भक्तजन ।

वलीयागमाही करे रूप भारी ॥
पदोंसाथ मापी त्रिलोकी सुसारी ॥
भुजादंडआगे गिरं छत्रलीने ॥
बलारातिको[१] मानकीनो सुखीने ॥ १३३ ॥
त्रसतगोकुलं त्राणकारी दयाले ॥
टरीअंबवरषा करे गोपपाले ॥
सुरारातिभामासुसुंधूर शीशं ॥
सुंसंध्याभ्रकांतं हसे देवईशं ॥ १३४ ॥
तिने दूरकारी मनो मारतंडं ॥
कहे कोविदा ईशतेदौरदंडं ॥
सुंदैत्येंद्र[२]वरख्यातटी पाटनारी ॥
नखंश्रेणकानाथतेरी उचारी ॥ १३५ ॥
त्रिलोकीरिपूकैटभो[३] कंठकाठं ॥
कटे चक्रधाराकरेभूमिमाँठं[४] ॥
फुरेज्योतिरुल्का[५] भुजादामतेजं ॥
करेखीरशैनं सजे शेषसेजं ॥ १३६ ॥
सदा शंभुप्यारे महातेजधारी ॥
भुजादंड[६]संभ्रांतिशैलं मुरारी ॥
मथे खीरसिंधुं भ्रमे बाहुपीने ॥
भयेलांछनं[७] ताहिवीचंनवीने ॥ १३७ ॥

---

१ इंद्र। २ हिरण्यकशिपु। ३ कैटभदैत्यका स्थूल कंठ। ४ भूमिको एक रस किया। ५ प्रज्वलतज्योति। ६ भुजारूप दण्डेकर भरमताजो है मन्दराचल। ७ चिह्न।

सुमोतीफलोदारहारं सुहाए ॥
प्रभा कंठमध्ये सके को बताए ॥
महामोहछेदी दिजे बोधनाथं ॥
नमो देवपादं दोऊजोर हाथं ॥ १३८ ॥

दोहा ।

आदिनारायण दीनवर, भये प्रसन्न उदार ॥
बोधवली सुत होइगो, भूपति भौन तिहार ॥१३९॥
मंदरनिकस विवेक पुन, पिख इम कीन प्रकास ॥
यह नीको स्थान है, ईहा करेंनिवास ॥ १४० ॥

कविरुवाच ॥

दोहा ।

सभासमेत सुएहु जब, पेखी भूपति रीत ॥
कीरतिवरमा देव तब, भयो इकागर चीत ॥ १४१ ॥
उपजेगो वैराग मन्न, आइ सरस्वति दयाल ॥
बोधकरे मनको भले, ह्वैहै कथा बिशाल ॥ १४२ ॥

इति श्रीमन्मानसिंह चरण शिक्षित गुलाबसिंह विरचिते प्रबोधचंद्रोदय नाटके चतुर्थोऽङ्कः समाप्तः ॥

इति श्रीमदुदासीनवर्य्य परमानंद शिष्य गुरुप्रसादविरचिता प्रबोधचंद्रोदय नाटक चतुर्थाऽङ्कटिप्पणिका समाप्ता ॥ ४ ॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ पञ्चमोऽङ्कप्रारंभः ॥ ५ ॥

दोहा ।

पदप्रसाद रघुनाथके, लहे बोध मतिमान ॥
हने मोहबलवानको, तिह बन्दो भगवान ॥ १ ॥
कीरतिवरमाभूपके, देखत सभामझार ॥
श्रद्धा कीन प्रवेश तब, लागी करन उचार ॥ २ ॥

श्रद्धोवाच ॥

सवैया ।

प्रसिद्ध सुपंथ अहे जगमैं, यह जातिकुबैर बडो दुखदाई ॥
क्रोध दवानलते जुबढी, क्षणमैं सगली कुलजाहि खपाई ॥
ज्यों बनबांससंघरसनते, पुन पावक कानन खेहरलाई ॥
तिमहींग्रह बाधवक्रोधजले, दुखमूर भयोद्दगतेजलजाई ॥ ३॥
दुःखदेखनअंकलिखेबिधिभाल,सुआजपिखेनहिजातमिटाए॥
मम सोदरबन्धु हते रणमैं, तन भूमिरुले किहठौर सिधाए ॥
दुरवारण दारुण शोक महां, अतिपावकमें उर भूर जलाए ॥
सुविवेककी मेह अनेक परे, क्षणपावकशोकनलाटबुझाए ४॥
सागर शैल मही सरिता, सभअंतकअंतसमे सुखपाए ॥
तौ त्रिणजीरणसें तनुमैं, जन कोविदको भवमै पत्याए ॥

---

१ बेदबोधितफलका अवश्य भावित्व निश्चयका नाम श्रद्धाहै ।

यद्यपि यों सुबिचारकरों, पुन तदपि शोक विवेक दबाए ॥
दीरघ शोककी ज्वाल बढे, बिधहा उर अंतर मोहि जलाए॥
यद्यपि क्रूरस्वभावहुते, मम भ्रात चले कुपंथनमाही ॥
काम सुक्रोध तथा मदमान मुए सगले रणमंडल माही ॥
तदपि दुःख कटे उरको, अरु देह सुकावत मैं जगमाही ॥
शोकदवानलज्वाल लगी मम अंतरआत्मकाननमाही ॥ ६ ॥

चौपाई ।

करकै मनकेमाहि विचार । श्रद्धा बहुरों कीन उचार ॥
विष्णुभक्ति उर परमदयाल । एसो मोप्रति कह्यो बिसाल॥७॥

विष्णुभक्तिरुवाच ॥

शंकरछन्द ।

इहठौर संगर होइगो भट करेंगे कुलनास ॥
मैहेरसाकों पापनहि मनमोहि भयो उदास ॥
अब छोडिके बनारसी मैं सालग्रामसु जांउ ॥
भगवानके स्थान बसकर काल ताहि बितांउ ॥ ८ ॥

दोहा ।

श्रद्धे युध वृरतांत सभ, करीनिवेदन आइ ॥
सो मै सगलो ताहिढिग, करों निवेदन जाइ ॥९ ॥

भुजंगप्रयातछन्द ।

तहांबेगश्रद्धासुनीकेसिधाई ॥
पिखेतीरथं गंडकापावनाई ॥
जहां आप देवो सदा वास धारे ॥
सुसंसारसिंधुं जनं पारतारे ॥ १० ॥

करी वन्दना ठौरनीके निहारी ॥
इही विष्णुभक्ति जनं मोक्षकारी ॥
मिली शांतिसंग कछू सोबिचारे ॥
चलों यासमीपं कहों सर्वसारे ॥ ११॥

दोहा।

विष्णुभक्ति अरु शांति पुन, बरीसभामहि आइ ॥
विष्णुभक्तिको कहेगी, शांतिसुकछू सुनाइ ॥ १२ ॥

शांतिरुवाच ॥

दोहा।

देवी तोकों मैं पिखों, चिंताकुल उरमाहि ॥
विष्णुभक्ति मोको कहो, कौनहेतु मनमाहि ॥ १३ ॥

विष्णुभक्तिरुवाच ॥

सवैया।

वत्से सुबनारसमांहि महारण होवत मोहविवेकहिकेरो ॥
जिहठौर सुबीर अनेकमरे सुमनो यमराजकरे सुनिबेरो ॥
तहि मोहबलीसहि बालविवेक भिरे रणमैं बहुभांति घनेरो ॥
नहि जानत तांगति कौनभई इहकारणते उर कंपत मेरो ॥ १४॥

दोहा।

कह्यो शांतिकहचिंतहै, तोहिकृपा जबहोइ ॥
तब विवेक जीते सही, मै जानो यहलोइ ॥ १५ ॥

---

१ वृतान्त। २ इंद्रियनिग्रहका नाम शांति है। ३ जडाऽनृताहंकारादिकोंसें रहित सत्यज्ञानानन्दाऽकारप्रत्यकूचेतनकूं विषयकरनेवाळी जाअन्तः करणकी वृत्ति है ताकानाम विष्णुभक्ति है।

दोहा।

यद्यपि वत्से ऐंवहै, संतनको कल्यान ॥
जांपतहै अनुमानते, तदपि संक महान ॥ १६ ॥
अबलौ श्रद्धा नहिअई, समा चारले पाहि ॥
यांते पुत्री मनविषे, बडो संदेह सुआहि ॥ १७ ॥
ताहिसमे श्रद्धा अई, लागी करन उचार ॥
विष्णुभक्ति मोकोमिलो, पुत्री भुजापसार ॥ १८ ॥
विष्णुभक्ति श्रद्धा कह्यो, सुखसों आई माइ ॥
श्रद्धा कह्यो प्रसाद तव, कह कलेश जनपाइ ॥१९॥
कह्यो शांति कर जोरकै, अंब नमो पद धार ॥
श्रद्धा कह्यो सुजलमिलो, पुत्री भुजापसार ॥ २० ॥
शांति मिली गलमैं तबै, भयो अनंदनृतांत ॥
विष्णुभक्ति बोली तबै, श्रद्धे कहहु वृतांत ॥ २१ ॥
देवीतेंप्रतिकूलको, जोकछु लायकहोइ ॥
सोवृतांत ऊहां भयो, और नजानो कोइ ॥ २२ ॥
विष्णुभक्ति पुन तिहकह्यो, मोकोकहि बिसतार ॥
गुलाबसिंह श्रद्धा तहा, लागी करन उचार ॥ २३ ॥

श्रद्धोवाच।

सवैया।

भागवती सुनतूंजबही, तह केशवमंदरते निकसाई ॥
प्रातभयो फुन ताहिसमै, रश्मीरविकोमलजोनिसराई ॥
दुंदभ भेरि निशानबजे, सुप्रलयघनकी धुनि जाहि लजाई ॥
बीरसुसिंहसमानगजे, वर तीमुखकातरकेपियराई ॥ २४ ॥

---

१ जाणीताहै।

खुरवाजिन औररथनेमिदली, धरचूरणधूर अकाशउडाई ॥
धर जान बिरंचिसुलोकचली, नहिं जान परे रविलीनछपाई॥
गज कुंभसंधूर सुभूर सजे, तिनकी इहभांति सुकोरबनाई ॥
जनसांझसमैदिगपश्चमते, यहलालघटाउमडी अधिकाई २५॥

कवित्त ।

अपनी पराई मिल आई सैन दोऊजब,
गजैबीर ऐसे जन प्रलयघन आएहैं ॥
भेदके सुबेलमानो लोकनके सुखेदहित ॥
पश्चमसु पूर्वके सिंधु उछलाएहैं ॥
राजनकेराय सुविवेक यों ठराइ मन,
दर[3]सननैयायिकको दूतकै पठाएहैं ॥
जैसे रामचन्दसुतवालिके पठाए तिन,॥
जाइ महामोंहको सुवाक योंसुनाए हैं ॥ २६ ॥

सवैया ।

तजके हरिमंदिरसंतरिदे, सरितातट पावनकानन सारे ॥
तुम जाइ मलेच्छनमाहि बसो, इहभांति सुरायविवेक उचारे॥
नहि जो पुन धार कृपाणहते, सभअंग गिरें धरमाहितुमारे ॥
तब जंबुक श्रोणत पानकरें, प[4]ल गीझ चरेंरणभूमिमझारे२७॥

विष्णुभक्तिरुवाच ॥

दोहा ।

मात प्यारी शशिमुखी, मृगनैनी बलिहार ॥
तिहिते बहुरो क्याभयो, मोको करो उचार ॥ २८ ॥

---

१ पंक्ति । २ कीनारे । ३ शास्त्र । ४ मांस ।

श्रद्धोवाच ॥

सवैया ।

पुन मोहमहीप सुन्यो जबही, बिकुटीभ्रुकुटीखलताहि चढाई॥
अति क्रूर सुक्रोध महानभयो, दृग लालकरे इहबात अलाई ॥
सुविवेककरे दुष्टात्मताफल, याहिपिखे इमदूत सुनाई ॥
रणहेत पखंडको आगमजो, खल मोह बली तब दीन पठाई२९

छप्पय छन्द ।

याअवसर पुन आपनी सैन अगारी आई ॥
श्रीसरस्वतीपद्महाथशशिकांतसुहाई ॥
वेदं वेदांग पुराण धर्म पुन शास्त्र सुजेते ॥
भारतलौ इतिहास संगमिल आए तेते ॥
पिखतां प्रताप अरिसैन बल गयो निखल सकुचाइ अति ॥
सुन ज्यों अतिपावनधारपिख दिव्यधुनी जग पाप गति॥३०॥

विष्णुभक्तिरुवाच ॥

दोहा ।

मात प्यारी शशिमुखी, मृगनैनी बलिहार ॥
तिसते बहुरों क्याभयो, मोको करो उचार ॥ ३१ ॥

श्रद्धोवाच ॥

तब देवी आगमजिते, वैष्णवसूर्यआदि ॥
गये सरस्वतीपास सभ, पूर्व शंषधुनि नाद ॥ ३२ ॥

---

१ ऋग. साम, यजु, अथर्वण, ये चारवेद । आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद,अर्थबवेद, ये चार उपवेद । शिक्षा, कल्प, व्याकरण. निरुक्त, छन्द, ज्योतिष, ये षट् वेदके अंग हैं । नारदपञ्चरात्र, रुद्रयामलादिक, ये आगम हैं । मत्स्यमार्कण्डेयादि अष्टादश पुराण हैं । मन्वादि अष्टादश स्मृति ये धर्मशास्त्र हैं ।

विष्णुभक्तिरुवाच ॥

मात प्यारी शशिमुखी, मृगनैनी बलिहारी ॥
तिसते बहुरो क्याभयो, मोको करो उचार ॥ ३३ ॥

श्रद्धोवाच

कवित्त।

सांख्य औ न्याय सुकणादकृत भाष्य पुन,
आगम अनेक सुमीमांसा संगलियाईहै ॥
युक्ति अपार मानो भुजाही हजारफुरे,
दिशाको मिटाइतम जंगहुलसाईहै ॥
धर्म्मेन्दुआनन सुबेदत्रयी संग मनो,
तीननैनहूं सों कात्यायनी सुहाईहै ॥
सरस्वतीके आगे प्रगटानी सुसहायइत,
बिजुरी अनेकजनु आई चमकाईहै ॥ ३४ ॥

शांतिरुवाच ॥

दोहा।

स्वभावविरोधी आगम, तरक तथा पुन जान ॥
मिले कथं रणहेत सभ, माता करो बखान ॥ ३५ ॥

श्रद्धावाच ॥

समानवंशते जेभये, लरे परस्पर सोइ ॥
जो परसों पुन रणपरे, संगति ताकी होइ ॥ ३६ ॥
तिमहम वेदप्रसूत सभ, कछु विरोध निजमाहिं ॥
वेदसुरक्षणहेत पुन, सभ इकत्र होइजाहिं ॥ ३७ ॥

---

१ ये सारे मीमांसाके विशेषण हैं। २ धर्म वेदार्थसोई भया इन्दु चन्द्रमा तद्वत् है मुख जिसका। ३ तीनबेद हैं नेत्रजिसके। ४ यथा कुरुपांडव।

नास्तिकपक्ष निषेध हित, संगतभई हमार॥
आगममाहि विरोधनहि, कीनो तत्त्वविचार॥ ३८ ॥
शांतिअनंत सुज्योतिजो, अद्वैअजबल एक॥
मायाके बहु सगमिल, भासे रूप अनेक ॥ ३९ ॥
नानाअगमपंथ बहु, एक जनावत ईश ॥
ज्यों वहुनदीप्रवाह जल, मिले जाइ वारीश ॥ ४० ॥

विष्णुभक्तिरुवाच ॥

मात प्यारी शशिमुखी, मृगनैनी बलिहार ॥
तिसते बहुरों क्याभयो, मोको करो उचार ॥ ४१ ॥

श्रद्धोवाच ॥

सवैया।

तब युध आरंभ भयो दुहूंने, रण आपसमै करि कुंभमिलाए ॥
सुतुरंगमसंग तुरंग जुरे, रथसंग रथी सुप्रहार लगाए ॥
सरपुंज पदाति चलाइ इसे, जनतोयद रोषभरे बरषाए ॥
अतियुध भयानक भूर भयो, डर कातरबीर महाहरषाए ॥ ४२ ॥
तह श्रोणतकीसुभई तटनी, बहुभूत पिसाच सुकंक सुहाए ॥
सरदार तुरंग मतंग बडे, जगदीश मनो तन सैल बनाए ॥
सिर छत्र सुहंस समान फिरे, सितपागसुफेनमनो चमकाए ॥
अतिबीर बली तह नक्रभये, पिख कातरतां उरमै दहलाए ४३ ॥

चौपाई।

याबिध दारुण भयो संग्राम। परवंडागम इम कीन सुकाम ॥
लोकायतको तंत्र सुजोई। कीनो सैन अगारी सोई॥ ४४ ॥
परस्परं दोनोदल जुटे । मुए लोकायत प्राण सुछुटे ॥
बहुर परखंडागमहै जोई। भये निर्मूल सगल तिहसोई ॥ ४५ ॥

सोमसिद्धांत कपालक जोई। सत्य आगम पिख भाग्योसोई॥
सत्यआगम इहुआइ बखानी। सुनो ताहिकी साचीबानी४६
मदभव भेषज करें बखान। ते मतिमंद सुमहा अजान
मनु स्मृतीलौ आगम जेते। सुने नमूढन कानन तेते४७॥
तथाचस्मृतिः—सुरां पीत्वा द्विजो मोहादग्निवर्णां सुरां पिवेत्।
तेन निर्दग्ध कायस्तु मुच्यते किल्बिषात्ततः॥ १॥

चौपाई।

सत्य आगम प्रवाह बहाए। सौगत काशीछोडि पलाए
परांसीक औ सिंधुगंधारे। अंग वंग पुन मगध पधारे४८॥
मलेच्छप्राय कलिंगादिक जेई। तामै जाइ बसे पुन तेई॥
और पखंड दिगंबर जेते। गये पंचालदेशको तेते॥ ४९॥
मालब और अभीर अनिरता। सागर मारूदेश त्रिगरता॥
बिचारे तामै गूढ स्वभाए। मंदर सेवक द्वारबनाए॥ ५०॥
नास्तकतर्क अहै पुन जेती। दलीमीमांसा पाइन तेती॥
तां अनुपथ मै वही सिद्धाई। जहां पखंड दुरे जगजाई५१॥

विष्णुभक्तिरुवाच॥

दोहा।

मात प्यारी शशिमुखी, मृगनैनी बलिहार॥
तिसतें बहुरो क्याभयो, मोको करो उचार॥ ५२॥

---

१ मनु स्मृति, अर्थ यहः-द्विजकहिये ब्राह्मण रागसें वा प्रमादसें सुरापानकरके अग्निवर्णवाली सुराका पानकरै तिस सुरापानकरके दग्ध शरीर हूआ तिसपापसें छुटिजावेहै। २ ये सर्वदेशोंके नामहै।

श्रद्धोवाच ॥

चौपाई ।

बहुरों वस्तुविचार उदारे । काम बली रणभीतर मारे ॥
क्षमा क्रोध गहि केसपछाऱ्यो । हिंसादिकको मूल उखाऱ्यो॥
सन्तोष लोभकोईउ रणमाऱ्यो । ज्यों रघुपति दशकंठ संहाऱ्यो॥
त्रिष्णा चोरी मिथ्याबैन । परिग्रहसहित उडाएगैन॥९४॥
अनसूया मत्सर जिती । नीके शंखबजाइ ॥
परउत्कर्षहिभावना, मदको दीन खपाइ ॥ ९५ ॥

विष्णुभक्तिरुवाच ॥

दोहा ।

भलाभया अरिगन मूए, संगरभूमिमझार
महामोहवृतांतजो, मोको करो उचार ॥ ९६ ॥

श्रद्धोवाच ॥

दोहा ।

योग[1]उपसरगन संग पुन, महामोह खलजोइ ॥
लीनभयो कहि कंदरे, जापतनाही सोइ ॥ ९७ ॥

विष्णुभक्तिरुवाच ॥

चौपाइ ।

मोह अनरथहि कारण जोई । रहियो सेष यह भली न होई ॥
पुरुष विवेकी जोसुर[2]ज्ञान । जो चाहे अपनी कल्यान९८॥

---

१ योगविघ्नसंग । २ देवज्ञानी ।

दोहा ।

अंग्नि ऋण अरु शत्रुको, देवे मूल उषार ॥
रहे सेष काहूसमै, बहुर देहि दुखभार ॥ ५९ ॥

चौपाई ।

मनको समाचार है जोई । श्रद्धा कहो प्रगट मोहि सोई ॥
श्रद्धा लागी करन बखान । विष्णुभक्ति सुनिये देकान ६० ॥
मूएपूत अरु पोते सारे । भयो दूखमन चीतमझारे ॥
शोकवेगमन :भूरि बहायो । जीवन त्याग सुतिहठहिरायो ६१
विष्णुभक्ति मुखमै मुसकानी । बहुरों याबिध कीन बखानी ॥
जो मनमरे सुजगतमझारे । तो सभ कार्य होहि हमारे ६२ ॥
पुरुष सनातनहै जगजोई । परमानंद सुपावे सोई ॥
परदुष्टात्म मनहै जोई । जीवनत्याग कहांतिन होई ६३ ॥
श्रद्धा बहुर सुकीन बखान । विष्णुभक्तिमें भाख्यो मान ॥
बोध उदेहित तूं दृढहोई । बेगमरे मनरहे नकोई ॥ ६४ ॥
बिष्णुभक्ति कर अंगीकार । बहुरोंलागी करन उचार ॥
वैरागउत्पतिहेत योंकीजे । व्याससरस्वती तहां पठीजे ६५

दोहा ।

भई सुअंतरध्यान वंहु, ऐसे मुखो अलाइ ॥
मनसंकल्पसु दोन पुन, बारे सभामहि आइ ॥ ६६ ॥

---

१ सो शास्त्रमेंभी कहाहै:-अत्यादरपरो विद्वानीहमानः स्थिरां श्रियम् । अग्नेः शेषं ऋणाच्छेषं शत्रोः शेषं नशेषयेत्। अथयहः-अत्यंत आदरयुक्त विद्वान् निश्चलसंपत्तिकूं इच्छाकरताहुआ अग्निकेशेषकूं ऋणकेशेषकूंशत्रुके शेषकू अवशेष नछोड़े अर्थात् तिस तिस समयमें दूरकरे । २ व्यासप्रणीतवाणी । ३ विष्णुभक्ति तथा श्रद्धा ।

सवैया।

मन नैननते अतिनीर बहे, पुन मुंड धुने मुख एहु अलाई ॥
कहि पूत गए तज मोहि ईहां, इकवारसु देवहु फेर दिखाई ॥
कहि राग गयो कहि द्वेषगयो, मदमानमुए कछुसार न पाई ॥
मम अंगनमें दुःखआगिबले, इकबारमिलो गलभीतर आई६७
इहठौरनवृद्धजहाजकोऊ मम, शोकसमुंद्रहिते गहि तारे ॥
सुअसूयते आदिसभे दुहिता, किहठौरगई नअहे कछुसारे ॥
तृष्णादिकजे सुतनारिहुती, किहभांतिमुई सभलोक मझारे ॥
बिनभागसुमें दुखभूरभये, इकबारमुए सबबन्धु हमारे ॥ ६८॥
अब ब्याकुल मेउर भूरभयो, विष पावक जानलगी उर आए ॥
अति दूखभयो तनुछीदतहै, दुःखशोकदवानल देह जलाए ॥
मम आज विवेक सुलोपभयो, सुत मोह महाउरमांहिबिढाए ॥
अब जीवनमें जग दूरभयो, तनतापबडो उरमोहि तपाए६९॥

दोहा।

यों नृपसभामझार मन, भई मूरछा भार ॥
आइसंकल्प सुतिहकह्यो, राजन देह संभार ॥ ७० ॥
सावधानमन होइ पुन, बोल्यो यों मुखमाहि ॥
कहां प्रवृति सुनारि मम, देत दिलासा नाहि ॥७१॥
सुन संकल्प दृग नीर अति, लागो करन उचार ॥
देवप्रवृतिसुकहा अब, दूढों जगतमझार ॥ ७२ ॥
कुटुंब शोक दवदाहिसों, दग्धरिदे अतिहोइ ॥
खेह उडी तनकी सुनो, मुई जगतम सोइ ॥ ७३ ॥

मन उवाच ॥

चौपाई ।

हाप्यारी किह ठौर सिधाई। भयो दूख मोको अधिकाई ॥
स्वप्नेभी मोहिसंग पियारी। हमेनहोती रंच न्यारी ॥ ७४ ॥
आज भागबिन दूर सिधाई। जीवनमोहि भयो दुःखदाई ॥
तदपि जीवो पापी भार। गिरियो मूरछा धरनमझार ७५॥

संकलपउवाच ॥

राजन सावधान अतिहूजे। होनीमाहि विषाद न कीजे ॥
भयो स्वस्तमन देह संभार। कहे संकलपहकोसुउचार ॥७६॥

मन उवाच ॥

चौपाई ।

सुत अरु दारवियोग सुजोई। जाहिभयो दुःख जानत सोई ॥
अब जीवनकी चाहन मोकों। मरोंबेगइमभाषततोकों॥७७॥

दोहा ।

चिता बनावो बेग अब, करोंसु अनल प्रवेश ॥
शोक अनल दुःख दाहजो, मेटो सकलकलेश ॥७८॥
याबिधि व्याकुलमनभयो, पायो बहुत कलेश ॥
तबै सरस्वती आइ पुन, कीनो सभाप्रवेश ॥ ७९ ॥

सवैया ।

श्वेतदुकूल धरे तनमै, मुख सारदचन्दसमान सुहाए ॥
कर एकविषे सभ आगमहै, पुन एकविषे मणिमाल फिराए ॥
पुन दोनविषै अभैबरदान, महाभुजसुंदर चार सुहाए ॥
बैन मयूषन आत्मको, तम दूरकरे उरताप मिटाए ॥ ८० ॥

सरस्वती उवाच ॥

चौपाई।

विष्णुभक्ति मोको सुपठायो। सखी सरस्वतीमनदुखपायो ॥
संतानवियोगभयोदुःखभारी। करोजाइतिहबोधउदारी॥८१॥
मनको जिहबिधि होइ बैराग। तैसो यतनकरो बडभाग ॥
सो मै अब मनकी ढिगजावों। तहाँजाइ वैरागउपावों ॥८२॥
गई सरस्वतीमनढिगआंकुल। कह्यो पूत क्योंभयो व्याकुल ॥
पूर्वहीते लख्यो प्रभाव। सभेअनित्य अहै जगभाव॥८३
अध्ययनकीयेतेंनिखलइतिहास। भारत लौ सभकथाप्रकास ॥
कलपशतायु अहे जगजोई। मरे अंत चतुरानन सोई॥८४॥
इंद्रलौ सुर असुर सजेते। मरें अंतको सगले तेते ॥
मनुआदिकमुनि मही समुंदा। नष्टकरेक्षणकोटमुकुंदा ॥८५॥
अहो मोह काते तव भयो। जाते बडो शोक उरछयो ॥
नष्टशरीर नष्ट जब होई। कोविद शोककरे नह कोई ८६॥
भाव अनित्य सदा उरधारो। नित्यअनित्य सुवस्तु निहारो ॥
नित्य अनित्य विवेकी जोई। शोकवेग तिहछुहेनकोई८७॥

तथाच श्रुतिः ॥

एकमेवं यदा ब्रह्म सत्यमन्यद्विकल्पितम् ॥
को मोहस्तत्र कः शोक एकत्वमनुपश्यतः ॥ २ ॥

---

१ जलदी। २ अर्थ यहः-जहाँ अखण्डाद्वितीयब्रह्महीं सत्य है औ ब्रह्मसे भिन्न सर्व विकल्पितहै नाम अनिर्वचनीहै इसप्रकार एकत्वकूं नाम परमार्थकूं जानतेहुये जीवन-मुक्तिको तहाँ कौन मोह है कौन शोक है न कोई मोह है न कोई शोक है मोहा-ऽभावात् शोकोऽपि नास्तीत्यर्थः।

मन उवाच ।

दोहा ।

शोक वेग दूषतभयो, देवी चीत हमार ॥
लहे बिवेक सुठौर नहिं, मेरे चीतमझार ॥ ८८ ॥

सरस्वती उवाच ॥

चौपाई ।

पूत सनेह दोषहैं भारी । जाते होइ अनरथ विकारी ॥
विषवलीबीजन सम जानो । करे कलेश अंतको मानो८९॥
सुत अरु नारी प्यारे जान । कीजे तहाँ सनेह महान ॥
बज्र अग्नि जाके उर अंतर । उपजे बेगदूषके अंकुर ॥ ९० ॥

दोहा ।

ताते शोक अनेक द्रुम, उपजे जगतमझार ॥
दूष अनल तनदाहकर, करे चीतको छार ॥ ९१ ॥

मन उवाच ॥

दोहा ।

देवी यदपि ऐंवहै, तदपि शोक सुभार ॥
मेउर अंतरको दहे, सकौनप्राणसुधार ॥ ९२ ॥
सरस्वती तें पदकंज जो, जीवनको सुखदैन ॥
भलाभया प्राणांतमे, सो पेखे निजनैन ॥ ९३ ॥

सरस्वती उवाच ।

दोहा ।

यह इक और अकाज सुत, चाहतहैं वसमोह ॥
जो आत्म निज हननको, कीनो निश्चे तोह ॥ ९४॥

चौपाई।

काम सुलोभादिक सुत जेते। अति अपकारी जानो तेते ॥
इनहित संचो कीजे जोई। करे अनरथ अंतको सोई९५॥
संचेहित जन अतिदुःखपाए। कामलोभ बहुपाप कमाए ॥
लोभ जबै उरमै हुलसाए। नदी अनेक सुगहन तराए९६॥
अतिऊच पुन सल चढाए। कानन घोरमाहि भरमाए ॥
धनमदमलनक्रूर मुख राजे। खडो कराए तिह दरवाजे९७॥
भने क्रूर भूपति मदभीने। हाथजुराइ करावत दीने ॥
यों अपकारी तें सुत जेते। तांहित लहे कलेश सुएते९८॥

मन उवाच।

चौपाई।

है योंही ज्यो मुखो बखाने। तदपि मे दुख और न जाने ॥
तिनके ललत बोल रिदहारी। चिरंकाल रिदमाहि चितारी९९
मनोप्राणको होइ विछेदा। याविध मै पावों उर खेदा ॥
याविध सुनि मनकीदुखबानी।कहे सरस्वती मुखोभवानी१००

सरस्वती उवाच ॥

दोहा।

ममताकी जन वासना, प्रेमसहित दृढहोई ॥
तिहमूलक अतिमोहवस, दुःखपावत जन लोई॥१०१॥
ग्रहकुकटको खाइ मन, जब मंजारग्रह आइ ॥
ममताके वस होइ तब, दूखघनो जन पाइ॥ १०२ ॥

---

१ तुमको दुखदाई। २ मदीयत्वाऽभिमानका नाम ममता है; तिसकी जावासना कहिये सर्वदा काल वर्तणा सोई है मूल कहिहै कारणजिसका महामोहका तिसमहा-मोहके वस यहदोहाका तात्पर्यार्थ है। ३ मुरगा।

ममता सून सुग्रह चटका, औ मूसाखाइ विडाल ॥
बिनसनेह दुख नाहि सुत, होवत हर्ष बिसाल॥१०३॥
सर्व अनरथसुबीज सुत, ममताही जगजान ॥
तां छेदनके माहि पुन, करो यतन मतिमन ॥१०४॥

मन उवाच ॥

चौपाई ।

मेतनते सुतथे उपजाए । कुकटमूसासम किम गाए ॥
ताको नास जने दुःखभार । कहे सरस्वती बहुर बिचार१०५

सरस्वती उवाच ॥

चौपाई ।

यातनते यूका उपजाए । औ ब्रणकृमी नहिजात गिनाए ॥
यतन सहित ताको नरघाए । दूख न रंचक मनमै पाए१०६
यूका कृमि सुत होइ समान । एकनको उर जान संतान ॥
महामोह एकनमै धार । मुए मूढ दुख लहे अपार॥१०८॥

मन उवाच ॥

चौपाई ।

तम अज्ञान ग्रन्थहै जोई । दुहउछेद जानो मैसोई ॥
सरस्वती तूं सर्वज्ञ उदार । लोकनमै जस आहि तुमार१०८॥
निरंतर कीनो दृढ अभ्यास । सनेह सूतजीवनको फास ॥
जाते फास इहै तुटिजाइ । देवी कहो सुमोहि उपाइ १०९॥

सरस्वती उवाच ॥

चौपाई ।

भांव अनित्यसु उरमैं धारो । प्रथम उपावसु यही निहारो
बिंधिसमागम अहेसु जोई । बिजुलीचमतकार समहोई ११०

दोहा ।

ऐसे उरमै धरातूं, करो सुदृढ अभ्यास ॥
होहु सुखी सुतलोकमें, कटे मोहकी फास ॥१११॥

मन उवाच ।

दोहा ।

देवीतोहिप्रसादते, नष्टभयो मम मोह ।।
पर उरमाहि संदेह इक, पूछतहो अब तोह ।।११२।।
तव मुखचन्दमरीचते, सुधाझरे उपदेश ॥
क्षालत मैं उर मलन पुन, हरहै शोक कलेश ॥ ११३ ॥
शोक सुमूल प्रहारको, औषध जो जगहोइ ॥
तापत मैं उरमलनको, मात बतावो सोइ ॥ ११४ ॥

सरस्वती उवाच ।

चौपाई ।

कहें मुनिश्वर सर्व बिचार । मर्मभेदते शोकप्रहार ॥
ताहि निवारण औषध इहै । चिंता उरमै मूल नगहै॥११५॥

मन उवाच ॥

दोहा ।

कह्यो तुमारो सत्यहै, परचिंता है दुर वार ॥
चिंता चित्त डुलाइहै, ज्योंजलइंदुब्यार ॥ ११६ ॥

---

१ पदार्थ । २ कर्तव्यउपदेशका नाम विधि है । ३ मर्मभेद कहिये दुःखके करनेवाले जे शोकप्रहार है ।

सरस्वतउिवाच ॥

चिंता चित बिकारसुत, देवे बहुत कलेश ॥
काहूं शांतिसुबिषे[1] मैं, कीजे ताहि निवेश ॥ ११७ ॥

मन उवाच ॥

तुम प्रसन्न अति होइ उर, मोको देहु बताइ ॥
ताको ध्यानसु मै धरो, दुःखपुंज मिटाई ॥ ११८ ॥

सरस्वती उवाच ॥

दोहा।

हे सुत यहअतिगोपहै, करेजु बन्धनमोष ॥
पर आरतउपदेशमैं, कहे न आगम दोष ॥ ११९ ॥

सवैया।

नव नीरद श्याम बिसालमहा, उरहार भुजासु कियूर सुहाए ॥
मकराकृत कुंडल काननमै जुगनैनसरोज मनो बिगसाए ॥
जनमाहि निदाघसुसीत सरोवर, वेद सदा जिह ब्रह्मबताए ॥
हरिध्याव सदा मनतूं उरमै, निज सूखलहैंदुखपुंजमिटाए १२०
सुनके मन दीरघस्वास लयो करजोर दोऊपदशीशझुकायो ॥
भवभेषज मात सुतोहिकह्यो भवसिंधुबह्यो तबमोहि बचायो ॥
करुणारस नैन बिसाल द्रवे, पुन सारस्वती गह हाथ उठायो ॥
सुतलाइकतूंउपदेशहिकी, अबनीठभयोइममेमनआयो १२१ ॥

चौपाई।

हे सुत औरप्रकारह कहों। तव संसारमोह सभ दहों ॥
जेतो मोह सुजामै होई। अंतजने तेतो दुख सोई ॥ १२२ ॥

---

१ शांति विषय कहिये शोकमोहादि रहित ब्रह्मविषयमें।

पितातने बाधव पति भाई। काल जवै गहि शीशलिजाई ॥
तब मूरखजनअतिदुख पावै। खोहिसिरोरुह धूडरुलावै १२३
ताडे उर द्दगते जलबहैं। पेख विवेकी यों उर कहैं ॥
यह संसार बडो दुखदाई। यामै चीतगडोमत राई १२४॥
द्दढवैराग सु जां उर होई। समसुख लहे आपमै सोई ॥
सरस्वती इम जबैं अलायो ताहीक्षण वैरागसु आयो॥ १२५॥

वैराग उवाच ॥

सवैया।

हाबिधि एक विडंबकऱ्यो, जिहते सभलोक सुतोहिठगाए ॥
एनवनीलसुनीरजपे, [1]सेलपांतदलंसम देहबनाए ॥
श्रोणत मांस सुमेद वसा, तिनऊपरते तुच अंबर छाए ॥
कैकरुणावसनात्रवायसचीलव्याघरजातसुखाए ॥ १२६ ॥

दोहा।

सर्व ओर श्रोणत मिल्यो, आमिखपिंड निहार ॥
परे सुवायस चील बहु, कोकरसके निवार ॥ १२७॥

सवैया।

हैमलमूत कुसूतसभो, पुन औरसलेषम भांजन भारी ॥
नाककी मैल जबैं निकसै अरु नाहिंसभार सुपोंचि उत्तारी ॥
तौ मुखचन्द कहैं जिहको, वहिनाहि निहारसकै तब नारी ॥
पिख रंचकमैल गलानीकरे, सठ जानतनाहिइहै कछुसारी १२८

१ नीलकमलका दलकहिये पत्ता तिसका जो पांत कहिये अग्रभाग पेसलकहिये कोमल तथा सूक्ष्म तिसकेसमान।

चौपाई।

लोल दोल[1] सम भोग सुहाए। जरा प्रणाम भये दुखदाए॥
बिपदाको यह गेह पछानो। धनको नास परमदुखमानो १२९
जितेलोक सभदेवहि शोक। अबला अहे अनरथन ओक॥
याहि घोरसंकटपथमाही। हाहाजीव अज्ञलपटाही॥१३०॥
योंभाषत वैराग सुआयो। सारस्वती तब बैन अलायो॥
हेसुत आयो यह वैराग। आदकरो सुतिह बडभाग॥१३१॥
कहांपूत मन एहु उचार्‍यो। बैरागसमीप सुतिह अनुसार्‍यो॥
तातचरण अब तें दरसाए। यह बैरागसु लागत पांए॥ १३२॥

मन उवाच।

जन्मसमे तब दरसन पाए। फेर पूतकहु कहां सिधाए॥
मेरे कंठ मिलो सुत पिआरे। मिले वैरागसु भुजापसारे १३३॥
तब मन याबिधि बैन अलायो। तैं पेखत मम शोक पलायो॥
वैराग बहुर मनको यों कहै। कहा शोकको अवसर अहै १३४
ज्यों पथभीतर पथक[2] मिलाए। समापाइ पुन बीछुरजाए॥
ज्यों त्रिणकाठसु नदीप्रवाहा। कबीमिले कबहोहि दुराहा १३५
ज्यों जलबूंद मेघकीधारा। यथा जहाजसु सिंधुमझारा॥
पिता मात सुत बधु सुदारा। मिले[3] बिछुरे या जगतमझारा १३६
याको होइ वियोग सुजबहीं। शोकनलए विवेकी तबहीं॥
ईहा जगतकी गतिहै जोई। कोटनमाहि लखै नर कोई १३७॥
पूर्वहुतो तात नर जोई। मरकर भयो पूत सुत सोई॥
पूत तातहित पिंड कराए। तात पूत कहिगोदखिलाए १३८॥

१ डोला वा हिंडोला। २ राही। ३ संयोगजो है सो वियोगजन्यही है।

दोहा।

तोहि पिता महिं मुएको, भये वरष सुत तीन ॥
हम भूमंडलमै वसैं, वह भये अमरपुर लीन ॥१३९॥

चौपाई।

कबहूं मर पर लोक सिधाए। कबहूं ग्रह भीतर उपजाए ॥
बिनगतिजाने मूरख रोवै। विवेकी शोक न रंचक जोवै १४०
ऐसै वचन सुने मन जबहीं। भयो अनंद चीतमें तबहीं ॥
सारस्वती जैसे यह कहे। सत्य बात एवेंही अहे ॥ १४१ ॥
अब मैं नीके लयो निहार। जूठो अहैं सगल संसार ॥
नवजोबन नारी है जेई। मधुकरसहित खिरेद्रुमतेई १४२॥
फूल मालती बहुत सुगंध। पसरे जह तह पौन सनबंध ॥
मृगतृष्णासायर जल जैसे। भयो विवेक पिखोअब तैसे १४३
बहुर सरस्वती करुणा:वान। मन प्रति लागी करन बखान ॥
यद्यपि यों तव भयो सुभान। तदपि वत्स कह्यो ममभान १४४
गिरही एक महूरत वीर। बिनआश्रम नहोवै धीर ॥
ताते अहे निवृतिसुजोई। धर्मचारणी कीजे सोई॥१४५॥
जैसे मंगलकरइ सनान। फूलमाल सिरऊपर ठान ॥
मले कपूरकुंकुमपट भीने। बाजे संग अनेक सुलीने१४६॥
व्याही तब प्रवृति सुनारि। त्योंनिवृति कर अगीकार ॥
शिषासूत्र अब तजो बिसाल। होइ दिगंबरकै मृगछाल१४७॥

---

१ तथा च ब्रह्मोपनिषच्छ्रुतिः।सशिखंवपनं कृत्वा वहिः सूत्रं त्यजेद्बुधः। यदक्षरं परं ब्रह्म तत्सूत्रमिति धारयेत्। १। सूचनात्सूत्रमित्याहुः सूत्रं नाम परं पदम्। तत्सूत्रं विदितं येन स विप्रो वेदपारगः। २। अर्थ यह-सन्यासेच्छु बुद्धिमान् पुरुष।

संतनसंग सो भले विचार । बसो इकांतसु विपिनमझार ॥
बन नवनीलसरोज सुलोचन । गहो निवृतिहोयभवमोचन १४८
लाजसहित मनकरे उचार । देवी कहहुसु अंगीकार ॥
बहुर सरस्वति करैं अलाप । मनके निखल मिटावै ताप १४९

दोहा ।

समदम सतसंतोषलौं, उपजे पूत तुम्हार ॥
सेवा तेरी वैकरैं, सगलेदुःख निवार ॥ १०६ ॥

चौपाइ ।

यम अरु नेमआदिकहे जेते । तोहि वजीर होहिंगे तेते ॥
ब्रह्मचर्य जो अहे महान । मंत्रकहेगो तैंढिग आन १५१

दोहा ।

बिबेक उपनिषत संगमिल, यौवराज सुखसार ॥
तोहिअनुग्रहते लहे, शांतिपूत उरधार ॥ १५२ ॥
मैत्रीआदिक चार यह, बहिनि मनोमलहार ॥
बिष्णुभक्ति तोपै पठी, आदर इने सुधार ॥ १५३ ॥
सरस्वती आयसुजो करो, धरीशीश मम सोइ ॥
योंकहिशीश झुकाइयो, गहे चरन कर दोइ ॥ १५४॥
आयुष मत सादरपिखो, यह संगत सुखकार ॥
यम नेम आसन सहित, प्राणायाम सुधार ॥१५५॥

-शिखासहित मुडन करवायके बाहरले सूत्रका त्याग करे जो अक्षर-परब्रह्मरूपी सूत्रहै तिस सूत्रको धारणकरे काहेतें; सूचनसे परब्रह्महीं सूत्रहै ऐसे कहतेहै इसलीये सूत्रनाम परम पदकाहैसो सूत्र जान्याहै जिसने ऐसा जो विप्र सो वेदपारगामि होताहै अर्थात् वेदके तात्पर्यको जाननेवाला होताहै । १ । २ । युवराजकर्मका नाम यौवराजहै सो युवराजकर्म यहहै अपने जीतेही राज्याभिषेकको देना ।

दीरघायु इनसंग तुम, अबै लहो सुखसार ॥
सामराज निजलोकमैं, नीक करो उदार ॥ १५६ ॥
तोहि इकाग्रहूंभये, जीव लहे सुखसार ॥
तव चंचलता संग बस, पाए बहुतें बिकार ॥१५७॥
सागरवीचीभेदते, ज्यों रवि नाना होइ ॥
बुद्धिवृत्ति वस जीव बहु, भयो परात्म सोइ ॥
वृतां सकल संकोचकर, वत्स तू सनीधार ॥
सहिजानंदसु अत्मा, लहेसूख निजसार ॥ १५९ ॥

चौपाई।

ग्यातीबंधु जिते रणमारे। प्रेतपतिके भौन सिधारे ॥
जलतिलांजुली ताको दीजे। देवनदीमै मज्जन कीजे१६०॥
सुन मन नैनन नीर बहायो। बहुरो याबिध बैन अलायो॥
जोकछु आयसु अहे तिहारी। करों सकल मैसिरपरधारी ॥

दोहा।

सारस्वती मन भाखि, योतजी रंगप्रवृति ॥
कीरतिवरमा देव तब, गहींचीत निरवृति ॥ १६२ ॥

---

१ परमात्मभावको प्राप्त होवै। २षट्विकार। ३सो परमात्मा बुद्धिवृत्तियोंके अधीन होयकर नानाजीवरूपसें प्रतीत होवै है तथा च श्रुतिः। एक एव हि भूतात्मा भूते भूते व्यवस्थितः। एकधा बहुधा चैव दृश्यते जलचन्द्रवत्। अर्थ यहः-एकही भूतात्मा परमात्मा भूतभूतमें स्थित हुआ तथा एकप्रकारका हुआभी जलमें चन्द्रमाकी न्याई बहुतप्रकारका देखाजावैहै इति। ४ नाटकप्रवृत्ति।

सोरठा।

जनहै पूत प्रबोध, उपनिषतसु बिवेक मिल॥
साधन बडो निरोध, जीवनमुक्तिसु होइगी ॥१६३॥

इति श्रीमन्मानसिंहचरणशिक्षितगुलाबसिंहविरचिते प्रबोधचन्द्रोदयनाटके वैराग्यो नाम पञ्चमोऽङ्कः समाप्तः ॥ ५ ॥

---

१ यह षष्ठमअङ्कका वीजहै ।
इति श्रीमदुदासीनवर्य्य परमानंद शिष्य गुरुप्रसादविरचिता प्रबोधचंद्रोदय नाटक पञ्चमांऽक टिप्पणिका समाप्ता ॥५॥



ॐ श्रीगणेशाय नमः ।

अथ षष्ठोङ्कः प्रारंभः ॥ ६ ॥

दोहा ।

याउपरंत सुहोयगी, जीवनमुक्ति रसाल ॥
सभामाहिं प्रवेशतब, कीनो शांति बिसाल ॥ १ ॥

शांतिरुवाच ॥

चौपाई ।

नृप विवेक इम मोहि अलायो । समाचार शांतितें पायो ॥
मन सुत कामादिकथे जेई । मुए महारणभीतर तेई ॥ २ ॥
मोहि बिलीन बैराग्य उपाए । पंचकेलेश सुदूर मिटाए ॥
मन प्रशांतिकी संगति धार । ततबोध नरकरे विचार ॥३॥
तुम उपनिषदपास अब जावो । आदरकर तिहममढिगल्यावो ॥
योंकहि शांति सुजबै पधारी । श्रद्धा आवत ताहिनिहारी४॥
हरषहेर इम शांति उचारे । यह श्रद्धा कछु मंत्र विचारे ॥
इही ओर यह आवतनीकी । सुनोभला अब याके जीकी५॥

---

१ जीवन्मुक्तिका लक्षणः-श्रवणादिकोंकरकै उत्पन्न भयाहै ब्रह्मसाक्षात्कार जिसकूं तिस ब्रह्मवेत्ताकूं जाजीवत् अवस्थाविषे कर्तृत्वभोक्तत्वादिरूपसर्वबन्धप्रतीतिकी निवृत्ति है ताकानाम जीवन्मुक्ति है। २ अविद्याऽस्मितारागद्वेषाऽभिनिवेशाः क्लेशाः मिथ्याज्ञान का नाम अविद्या है, १ बुद्धि तथा आत्माके ऐक्याध्यासका नाम अस्मिता है, २ विषयकी इच्छाका नाम राग है, ३ साधनसहितदुःखमें अप्रीतिद्वेष है ४ मरणसें भयकानाम अभिनिवेश है ५॥

दोहा ।

श्रद्धा तबै प्रवेशकर, कीनो इहै विचार ॥
नैनसुधा पूरतभये, भूपतिकुलालहि निहार ॥ ६ ॥
जहांदुष्टनीकेहने, पूजेसंतसमादि ॥
वशअनुजीवीसेव्यहै, स्वामिदेव अनादि ॥ ७ ॥
शांतिकहे अंबा सुनो, कौन सुमंत्र विचार ॥
करेचीतकहिहैंचली, मोको करो उचार ॥ ८ ॥

श्रद्धोवाच ॥

दोहा ।

मैं विवेककेढिग चली, पठीपुरुष मतिमान ॥
पुरुषविवेक मिलाओगी, मंत्र इहै उरठान ॥ ९ ॥

शांतिरुवाच ॥

दोहा ।

कहो पुरुषको कौनविधि, मनसों बरतन आहि ॥
काराग्रह बांधेविषे, ज्योंबरते नरनाहि ॥ १० ॥
कहों पुरुषहीं करेगो, सामराज जगमाहि ॥
अहेशांति इउहीं सुनो, ज्योंसमुझे मनमाहि ॥ ११ ॥
कैसे मायामाहि अब, देव अनुग्रह आहि ॥
निर्ग्रह यों कहिबो रह्यो, कहें अनुग्रह काहि ॥ १२ ॥

---

१ राजकुलको। २ राजकुलमें मोहादिक। ३ वशकहिये शमादि कर्णकर: अनुजीवीकहिये ईश्वरके अनुपश्चात् है जीवना जिनोंका सो कहिये वशअनुजीवी ऐसे जे जीवहैं तिन जीवोंकर स्वामीदेवअनादि सेव्य है नाम पूज्यहै। ४ श्रद्धा कहतीहै हेशांति निग्रह ऐसा तेरेको कहना रहाथा.(उचितथा) परंतु अनुग्रहऐसे कैसाकहती है काहेतें।

देवमाहिं माया अहे, सर्वअनरथनबीज ॥
ताको निग्रह भलेकर, कियोचहे निरबीज ॥ १३ ॥

शांतिरुवाच ॥

काराग्रहमै डारमन, माया निग्रहकीन ॥
कहो काहिमै अब अहे, भूपतिको उरलीन ॥ १४ ॥

श्रद्धोवाच ॥

दोहा ।

नित्य अनित्य विचारमै, सदा चितपरवाहि ॥
इह अमुत्र वैराग्यजो, वही सुहृद सुआहि ॥ १५ ॥
मत्री अहे यमनेमही, सम दम सखा सुजान ॥
मैत्री करुणादिक सभे, यही ग्रहदासी मान ॥ १६ ॥
है मुक्तेच्छा सहचरी, भये पुरुष बलवंत ॥
ममता मोह संकल्पसह, हने कृपा भगवंत ॥ १७ ॥

शांतिरुवाच ॥

दोहा ।

कहो स्वामी पुरुषकी, धर्मकर्मफलमाहि ॥
किहिबिधि अहे प्रवृतिअब, मैंसमुझों मनमाहि ॥ १८ ॥

श्रद्धोवाच ॥

सोरठा ।

जादिन भयो वैराग्य, पुत्रीलेदिन ताहिते ॥
इह अमुत्र फलत्याग, स्वामीधारे ताहिते ॥ १९ ॥

---

१ सहकारी है। २ सखीहै । ३ अर्थ यहः-जीवरूपस्वामी पुरुषकी धर्म रूपकर्मके फलमें प्रवृत्ति किसप्रकारकीहै यहकहो ।

दोहा।

पापनके फल नरकतें, जैसै डरपै नीत ॥
त्योंही सुखहै पुंनफल, स्वर्गभयो भयभीत ॥ २० ॥
सुकृतको फल भोगसुख, मिले कदाचित् जोइ ॥
करै गिलानि सुइरबिषे, अधिक नमाने सोइ ॥ २१
प्रत्यक्प्रवण पिखपुरुषको, सफल आपनिरधार ॥
धर्म आपही होइयो, सबै स्थल व्यापार ॥ २२ ॥

शांतिरुवाच ॥

दोहा।

ज उपसेरगसुसंगलै, भयो लीन खल मोह ॥
कहो वृतांत सुताहिको, जननी पूछो तोहि ॥ २३ ॥

श्रद्धोवाच ॥

दोहा।

मधुमत्तविद्यासहित पुनि, पठे मोह उपसरग ॥
लोभनिमित सुपुरुषको, दिखलाए बहुस्वरग ॥ २४ ॥
जो तिनमाहि आसक्त पुन, पुरुष कदाचित होइ ॥
तौ विवेक उपनिषतको, स्मरनकरे न कोइ ॥ २५ ॥

शांतिरुवाच ॥

दोहा।

मात प्यारी शशिमुखी, मृगनैनी बलहार ॥
तिसते बहुरो क्याभयो, मोको करो उचार ॥ २६ ॥

---

१ स्वामीपुरुषको आत्मैकनिष्ठाकुं देखकर सोधर्म कीयाहै वैराग्यरूप फलजिसने ऐसा अपने आपकू मानकर स्वयं आपही व्यापारसें रहित होताभया। २ योगविघ्न। ३ काचित् सिद्धि।

श्रद्धोवाच ॥

चौपाई।

तब उपसर्ग पुरुष ढिगगए। कौतुक एक करत पुन भये ॥
इंद्रजालकी विद्या जोई। लोभहेत दिखलाई सोई ॥२७॥

दोहा।

निखलसिद्धि प्रगटी तहा, पिखी पुरुष मनलाइ ॥
गुलाबसिंह प्रभावतहि, नीके देत सुनाइ ॥ २८ ॥

सवैया।

शतयोजनते सभबातसुने, पुन नीरनपै बिन नावचलाए ॥
बिन ध्येनकिये सभ वेदपुराण, सुभारतलौइतिहाससुआए ॥
बिनछन्दपढे सुभछन्दनके, भवमंडलमै सबकाव्य बनाए ॥
सुजराउजरेसुरथानदिखे, सभलोकनको रुचिप्रेर चलाए२९ ॥
दृढभीतनते निकसे क्षणमै, तनु मेरुसमान सुभूर बनाए ॥
तनुकंटकपै समतूल रहे, क्षणमै रबिमंडलमाहि सुजाए ॥
इहभांति निहातर देवनजू, ढिगआनभलेपद मोल झुकाए ॥
इहठौर स्वामिन बासकरो, दुखद्वंदसभै अब तोहि मिटाए ३०

दोहा।

ईहा जन्म न मृतहै, यह अतिसुंदर देश ॥
ईहाबैठ कलोलकर, मनके हरो कलेश ॥ ३१ ॥

दोहा।

विद्याधरी अप्पसरा, विविध सुगंधे सुरनार ॥
ते पदबन्दनकरतहैं, हाथ उपाइनधार ॥ ३२ ॥

---

१ कोई सुंदर रूपवाली इंद्रजालिकविद्यानाम अविद्यमानार्थका प्रकाशरूप विद्या
२ स्त्री या वा मोहनरूप।

सवैया।

याहिपिखो तुम सुंदरता, मदमत्तविलोचन रूप अपारे ॥
दीरघ वारज गंधमिली, अलक कचघुघरवंत सुकारे ॥
पीनपयोधर रंभउरू कमलानन अंजननैन सवारे ॥
दाडमसीरदपांतिबनी, समदामनि हासहरे तमभारे ॥ ३३ ॥
हाटककी सिकता धरनी, पुन इंद्रसी नीलमणि धनलाई ॥
एबनपांति नृतांतखिरी, बहुफूल सुगंध चहूंदिश छाई ॥
गुंजत एमधुपावलिया, मनबानलियासुमनोजचलाई ॥
संग विलासनि केलकरो, तपसा तव पुंनफले अब आई ॥३४॥

शांतिरुवाच ॥

दोहा।

मात प्यारी शशिमुखी, मृगनैनी बलिहार ॥
तिसते बहुरों क्याभयो, मोको करो उचार ॥ ३५ ॥

श्रद्धोवाच ॥

दोहा।

सुन उपसर्गनवाकको, कीनो पुरुष उचार ॥
अतिसुंदर यह भोगसुख, मोमन बाढियो प्यार ॥३६॥
संकल्पकियो उत्साहमन, स्वामीपुरुष उदार ॥
योंमतिसुन उर खेदगहि, करे सुशांति उचार ।

शांतिरुवाच ॥

दोहा।

हाधिग हादुख कष्टअति, भई बडी अबहान ॥
पुनरपि जगफासीविषे, पऱ्यो सुपुरुष महान ॥ ३८ ॥

---

१ केला । २ रेती ॥

मात प्यारी शशिमुखी, मृगनैनी बलिहार ॥
तिसते बहुरो क्याभयो, मोको करो उचार ॥ ३९ ॥

श्रद्धोवाच ॥

चौपाई ।

तब तांमीत पुरुष इकसार । तर्कनाम तिहकरे उचार ॥
क्रोधभरे दृग ताहि सुलाल । मनो समीर सखा सुबिसाल ४०
तिन उपसर्गन ओर निहार । बहुरपुरुषको कीन उचार ॥
यहै अस्थानी देव सुजेते । बिघनकरें तुमको प्रतितेते ४१ ॥
श्रद्धा याबचननकेमाही । मीत कदाचित कीजे नाही ॥
थानअभिमानी देव सुजेते । हैं अतिधूरत वंचक तेते ॥ ४२ ॥
विषयँवडसपिंडीको डारे । मीनसमान निखलजन मारे ॥
भोगनकी चिंता दुखआगे । डारे तोहि न लखे अभागे ४३ ॥

सवैया ।

एह अतिसुंदर नारि जितीनरकाऽग्निकी सुशिषा पहिचानो ॥
ताहिकि संगमते दुखजोबहु वारलयो कहितोहि भुलानो ॥
तेंतप दीरघ नीतकरे, सभलोक बखानत तोहि स्यानो ॥
भोगनपावकते हटियो, दुःखनाहिभरो सुकह्यो मम मानो ४४ ॥
भवसागरतारणयोग्य जहाज सुतें चिरकालहिते अब पायो ॥
मदमत्तविलोचननारि दिखाइ सुचाहतहैं सुरतोहि छुडायो ॥

---

१ सत् असत् विचारका नाम तर्कहै । २ अग्नि । ३ मधुमत्तसिद्धि अभिमानी देव-ते । ४ विषयरूप मांसयुक्तकांटा । ५ मनुष्यशरीर ।

अब छोडि जहाज अगारनदी सुचहेंकिम आत्म आपबहायो॥
इह सीष सुनो समपीकमलीनसुभोगनहेर कहा हुलसायो४५
डार पटंबर अंबरधार दिगंबर जाबन बास कएहै ॥
माहि अरण्य करें तपदीरघ, भोगमहानल पारभयेहै ॥
नाम महामुनि जाहि कहें, अरु कांपत भूपतिपांइ पएहै ॥
नारि सुघूमनघेरबिषे, पर फेर रसातलमाहि गएहै ॥ ४६ ॥
बहुबारभयो नरनारि तुही, इहबार कहांसु अघाइ रहेगो ॥
अब याहिजहाजते पांउखिसे, भवसागरधारसु फेर बहेगो ॥
अब हाथ अलंबत मोक्षअहै, इह औसर मीत न फेर लहेगो ॥
कविसिंहगुलाब नमानत जो, नरकाऽग्निमै बहुदुःख सहेगो४७

शांतिरुवाच ॥

दोहा।

मात प्यारी शशिमुखी, मृगनैनीबलिहार॥
तिसते बहुरो क्याभयो; मोको करो उचार॥४८॥

श्रद्धोवाच ॥

दोहा।

तब तांवचनन कानधर, विषय नस्वस्ति[1]उचार ॥
मधुमत्तविद्यामोह तज, भयो वैराग उदार॥४९॥

सवैया।

भोगनकेदुख चीत चितार, सुशीश धुन्यो मन ताहि उठायो॥
आज महादुखसिंधुविषे, परतो मम मीत सुतोहि बचायो ॥
फेर भजों नहिं भोग कबी, इह मीत सुनो तव साच बतायो ॥
इमभाषभले दृग लाज बढी, भरअंक भले सुसखा गललायो५०

१ विषमहै विषयप्रवाह जिसका।

शांतिरुवाच ॥

चौपाई ।

भलाभया बहुपुरुष उदार भयो विरक्त कटे दुःखभार ॥
तूं अब मातुसु कहां सिद्धाई । मोकों नीके देहु बताई ॥५१॥

श्रद्धोवाच ॥

दोहा ।

पुरुष पठाई मै चली, हेरन आज विवेक ॥
जावों भूपविवेकढिग, मेटिसु विघन अनेक ॥ ५२ ॥

शांतिरुवाच ॥

चौपाई ।

मोकोबी पुन रायविवेकपठ्यो सुकारज भाषो एक ॥
उपनिषतलियावनहेत पठाई । चले सबेग बिलंब मिटाई॥५३॥

कीवरुवाच ॥

दोहा ।

विवेक उपनिषत समीप, श्रद्धा शांति उदार ॥
गई जबै बहुपुरुष पुन,आए सभामझार ॥५४ ॥
करविचार उर हर्ष अति,लागो करन उचार ॥
गुलाबसिंह बहुवाकपुन,सुनो साध उरधार ५५ ॥

पुरुष उवाच ॥

दोहा ।

अहो महातम है बडो,विष्णुभक्तिको लोइ ॥
जांप्रसादबन्धनमिटे,मुक्तिजीव जग होइ ॥ ५६ ॥

सवैया ।

जिहमाहि कलेश बडीलहरी, सुभयानक जाहिके पंथ अपारा॥
सुत मीत कलत्र सुबंधु सखा, मकराग्रह ग्रन्थ बडें सुबिकारा॥
निजक्रोध महाबडवानलहै, तृष्णानिजनागनिरूपसुकारा ॥
हरिकी भक्ती पदकंजप्रसाद तऱ्यो भवसागरमैं अजभारा॥५७॥

दोहा ।

तर्क बडो मम मीतहैं, होयो मोहि सहाइ ॥
पावक भोग करालते, लीनो मोहि बचाइ ॥ ५८ ॥

कविरुवाच ॥

दोहा ।

उपनिषत शांति दोनो तबै, कीनो सभाप्रवेश ॥
कीरतिवरमा मोलमणि, बैठो जहाँ नरेश ॥ ५९ ॥

शांतिरुवाच ॥

दोहा ।

चलो सखी सुविवेकका, बदन निहारो आज ॥
भाग तुमारे जागयाहोहि सभे तव काज ॥ ६० ॥

उपनिषदुवाच ॥

दोहा ।

सखी स्वामी निरदई, जाहि त्याग्यो मोहि ॥
ताको मुख किहविध पिखों तू मनभीतरजोहि ॥६१॥

१ यहां रूपकालंकार है।

शांतिरुवाच ॥

दोहा ।

देवी स्वामी परोंथो, परम विपदके माहि ॥
इहविध एहु:उलाहनो, तूं भाषतहैं ताहिं ॥ ६२ ॥

उपनिषदुवाच ॥

सखी न देखी दुरदशा, मोपर बीती जोइ ॥
जाकर ऐसैं तूंकहै, सुनो बखानो सोइ ॥ ६३ ॥

चित्रपदाछन्द ।

भुजदंडतोडिकुपंडितामणिकंठकीबहुफोर ॥
करकाढिकंकणलीतियाकररहीमैंबहुशोर ॥
चूडामणिममशीशतेकटिदीनवहुतकलेस ॥
समद्रोपतीकेशांतिमेरेंखैंचियातिनकेस ॥ ६४ ॥
कुछ अरथ मेरो औरथो, वहु करहैं औरप्रकार ॥
जीवकाके हेत मूरख तोडिफोडि उचार ॥
अर्थको सुअनरथभाखैं देहि बहु संताप ॥
बहुभांति मैं दुखपाइयो नहिडरे ते सठपाप ॥ ६५ ॥

---

१ कुत्सित पण्डितोंने मेरे मनन तथा निदिध्यासन रूपदो भुजादंड तोड डारेहैं तहां ब्रह्मरूप विषयसें भिन्न विषयका जो मनन है तथा निदिध्यासन है सोई भुजा- ओंका तोडना है धारणा ध्यान समाधिरूप कंठकी मणिहै सोभी ब्रह्मरूप विषयसें भिन्न विषयका धारणा ध्यान समाधि करनाहीं तिसका फोड़ना है-उपक्रम उपसंहा- रादि रूप जे वेदांततात्पर्यके षट्‌ लिंग है, सोई भये कङ्कण तिनकोभी वेदांततात्पर्यकूं छोडिकर अन्यार्थकेतात्पर्यपर लगावना यही तिनका लेनाहै-चूडामणि कहिये शिरभू- षणकीन्याई आत्म स्वरूप तिसका जों विप्रीत निश्चय है यहीशिरसें काटिदेनाहै-केश कहिये वेदांतभाग उपनिषद्भाग तिसको जो अन्यार्थपर लगाना सोई केशोंका खैंचना है द्रोपतिवत यह छन्दका तात्पर्य है।

दुरविदग्ध अनेक मोको मिले लोकमलीन ॥
विवेक पतिबिन जान मोको चहैं दासीकीन ॥
केचिंत कहैं जग सत तूं मुखकरो इहप्रकास ॥
केचिंत कहैं मत द्वैतमै उपनिषद तूं कर वास ॥ ६६॥
इकं कहैं जीव परेशको है भेद एहु बखान ॥
इकं कहैं भेदाऽभेदको उपनिषद तूं उर मान ॥
इह भांतिव्याकुलमै करी नहिलखै मूरख बात ॥
ज्यों दुष्ट कौरवसभाम भई द्रौपदी बिख्यात ६७ ॥

शांतिरुवाच ॥

चित्रपदाछन्द।

महा मोहके अपराधते तैं लह्यो है दुःख सोइ ॥
देवको अपराध नाही होनहारी होइ ॥
मोह मन उपजाइ काम सुपुरुषको गहि लीन ॥
डार विषयआरण्यमै सुविवेक दूरहिकीन ॥ ६८॥
कुल नारिके यहधर्म देवी रच्यो भगवान ॥
संपद सुआपदमै सदा वहुचहे निजपति प्रान ॥
अब आउ दर्शन देहु नीके मिष्टपिया प्रतिबोल ॥
अब फले तोहि मनोरथा सभहते द्वेषी टोलि ॥ ६९ ॥

उपनिषदुवाच ॥

दोहा।

पुत्री गीता यों कह्यो, मोहि इकंत बिठाइ ॥
स्वामी भरता पुरुषको, करो तोष अबजाइ ॥ ७० ॥

---

१ दुष्टबुद्धि। २ सांख्यमतवाले ३ मीमांसक। ४ नैयायिक। ५ त्रिदण्डी। ६ उपनिषत् अर्थकी प्रतिपादिकताकर वा उपनिषत्सकाशतें उत्पत्तिहोनेकर गीताको उपनिषतका पुत्रिपणा है।

प्रबोधपूत तव होइगो, बन्धन दये निवार ॥
परस्वामीप्रति कहनते, आवत लाज सुभार ॥ ७१ ॥

शांतिरुवाच ॥

दोहा।

विष्णुभक्ति सुविवेकको, कीनो इह उचार ॥
पेखो स्वामी पुरुष अब, काहे करें विचार ॥ ७२ ॥
उपनिषद कह्यो ज्यों कहितहै, सोइकरों बडभाग ॥
गुलाबसिंह दोनो तबी, गई अखाडो त्याग ॥ ७३ ॥
तब विवेक राजा सुनो, श्रद्धासहित सुहाइ ॥
मोह पटलको दूरकर,बऱ्यो सभामहि आइ ॥ ७४ ॥

विवेक उवाच ॥

दोहा।

श्रद्धे शांति सुगई है, उपनिषदनिहारन काज ॥
किहविधि प्यारी को पिखों,मोहि बखानो आज॥७५॥
देव सुआयसुथारीया, गई शीस परमान ॥
विष्णुभक्ति पुन शांतिको,कीनो एह बखान ॥ ७६ ॥
मंदर नाम सुसैलमै, है हरिको अस्थान ॥
तह गीताके निकट बहु, बसत तर्क डरमान ॥७७॥

विवेक उवाच ॥

तर्कविद्यातेकहो, केस तिह डरभार ॥

श्रद्धोवाच ।

देव उपनिषद करेगी, तोको एह उचार ॥७८॥
अब तुम चलो समीप प्रभु,लेवो पुरुष निहार ॥
बैठ इकंत सुध्यायहै, तोहि आगमन उदार ॥ ७९ ॥

तब विवेकढिगजाइकै, कीनो पुरुष प्रमाण ॥
कह्यो पुरुष तव एहु सुत, कीनो भलो न काम॥८०॥
ज्ञानवृद्ध तुम हो बडे, हमको पितासमान ॥
यही अर्थ ऋषिदेवता, पूर्व कीन बषान ॥ ८१ ॥

चौपाई।

एकसमे आपके मारे। भूले निगम देव ऋषि सारे ॥
तिनको एक बाल थो जोई। तीर सरस्वती बसियो सोई८२

दोहा।

दधीचऋषीसर पूतबहु, जन्यो सरस्वतीमाहि ॥
नाम सारस्वत ताहिको, धन्यो जगतकेमाहि ॥८३ ॥

चौपाई।

मात सरस्वती तिह प्रतिपाल। रहे कंठ तिहबेद बिसाल ॥
तबते समापाइ ऋषिजेत। पूछे परस्पर देव सुतेते ॥ ८४ ॥
जब तिन कंठन किने निहारे। तबसे बालकपास पधारे ॥
कह्यो बालको बेद पढैये। कह्यो बाल पूतसुनलैये ॥ ८५ ॥

---

१ श्रुतिः–प्रजापतिर्ब्रह्मा देवान् सृष्ट्वा केनचिन्निमित्तेनाज्ञानिनो भूयास्तुरिति देवाञ्शशाप। तदनन्तरंताननुगृह्णन् देवानामन्योन्यं पितृत्वं पुत्रत्वं च ददौ। अर्थ यहः–प्रजाका पति ब्रह्माजी सबदेवताओंको रचिकर तथा कोई कार्यरूप निमित्तकर अज्ञानि होवो इसप्रकार देवताओंको शाप देतेभये तिसके अनन्तर तिनोंपर अनुग्रह करते-हुए ब्रह्माजी देवताओंको परस्पर पितापणा तथा पुत्रपणा देतेभये। इसश्रुतिकर देवते धर्ममार्गमें नष्टसंज्ञावाले होतेभये, पुत्रोंसे वेद पूछिकर पुत्रसंज्ञाको प्राप्तभये इसकहनेकर ज्ञानवृद्धको पितारूपिता दिखाई, यह संक्षेपार्थ है ऋषिप्रसंग आगे कहिते है। २ नारदादि।

मेरे शिष्य होहुगे जबही । वेदपढावो तुमको तबही ॥
क्रोधभरे उरमै ऋषिसारे । तब ब्रह्माके पास पधारे ॥ ८६ ॥
देवदधीच पूतहै जोई । हम अतिवृद्ध बाल अतिसोई ॥
बेदपढनहित हम ढिगगए । पूतपूतकरि मुखो अलए॥८७॥

दोहा ।

मेरे होवो शिष्य जब, तभी पढावों वेद ॥
यों सुन बालकबैन प्रभु, मनमें बढचो सुखेद ॥८८॥

चौपाई ।

तब चतुरानन बैन बखाने । विद्यावृद्ध वृद्ध सुर[1] माने ॥
तुम अतिबाल वृद्ध सो कहिये।होयशिष्य विद्याको लहिये८९

दोहा ।

यों चतुरानन बैन सुन, गए ऋषीसर सर्व ॥
दधीच पूतके शिष्यबहु, भये मिटाइ सुगरब ॥९०॥

चौपाई ।

तातैं तुमहो पिता समान । यों विवेकप्रति पुरुष बखान ॥
हमपर ऐसी दया सुकीजै। सगलो मोह दूरकरदीजै॥ ९१ ॥
याअवसरपुन शांति सु आई । उपनिषत सुताके संग सुहाई॥
शांति पुरुषकोकीन उचार । उपनिषतकरेपदबंदन थार ९२॥
शांतिन ऐसे करो बखान । उपनिषत अहै मममात समान ॥
ततबोधको दए उपाइ । तातैं हम इन लागे पांइ ॥ ९३ ॥

---

१ देवते मानतेहैं ।

दोहा।

माता औ उपनिषतमै, बडो अतरो जान ॥
बहुदृढबन्धनको करे, यह करे बध्न समहान॥ ९४ ॥
पुन उपनिषत बिबेकपिख, अभिवन्दन तिहधार ॥
बैठी किंचित दूर हित, पूछत पुरुष विचार ॥ ९५ ॥
कहो अब एते दिवस, कहि कहि करे बितीत ॥
उपनिषत बखाने पुरुषको, सुनो इकागर चीत॥९६॥

चौपाई।

मठमझार पुन शून अगार। मूरखजनकी संगतधार ॥
आपददिन इहभांति बिताए। कहांकहो मै अतिदुःखपाए ९७

दोहा।

कह्यो पुरुष बहिततकछु, जानतथे पुन तोहि ॥
उपनिषद कह्यो कहिजानहै, सगल व्यापे मोहि॥९८॥

चौपाई।

ते निजइच्छाके अनुसार। मेरो अरथ सुकरैं उचार ॥
अरथ बिचारबिना इंड कलपैं। द्रवेडागणज्यों बाणी जलपैं९९
परको ठाग द्रव्य तिह हरैं। याहित मोहि बिचारण करैं ॥
मै उपनिषत मोक्षको कारण। पेट हेत सठ करैं सुधारण १००

दोहा।

पुरुष कह्यो सुन मात पुन, मोप्रति करो उचार ॥
किहबिध बासरतैंबिते, भाखो सगल विचार ॥१०१॥

---

१ मेरे पीछे लग गए। २ द्रवणागण कहिये जेसे द्राविडदेशस्थपुरुषोंकी भाषाको सुनकर कलपना करतेहैं तद्वत् वाणी कहतेभये। वा द्रवणागण कहिये मेंडकोंक समुदाय।

दोहा।

पुरुषप्रश्न उपनिषत सुन, लागी करन बखान ॥
गुलाबसिंह वहिवाक पुन, साधधरो निज कान॥१०२

उपनिद्वुवाच ॥

चौपाई।

ता मै चली बडोपथ जहां। देखी यज्ञविद्या तहां
इत कृष्णजिन[1] अग्निजलाई। इत समधाधृत जूपसुहाई १०३
स्रोआलौ सभभांजन[2] हाथ। इष्टिपशु[3] मख सोम सुसाथ ॥
कर्मकांडकी पद्धति जोई। नीके मुखो अलाए सोई १०४
तबमै मनमैं कीन विचारा। एहु घरे बहु पुस्तक भारा ॥
ए कछु ततपछाने मेरा। कोदिन ईहा करों बसेरा १०५॥
तब मै ताढिग शीशु झुकायो। तिन मोको पुन एहु अलायो
कहु कल्याणी वांछतसार। तब मैं तिनसो कीन उचार१०६
मै अनाथ दूरमम नाह। तोही समीप बसनकी चाह ॥
तब तिन मोको एहु बखानी। कौनकाज तूं करें कल्याणी१०७
तब मैं कह्यो जुपुरुष उदार। ताको रूप सुकरों उचार ॥
जांतैं[4] विश्व उदे यह होई। जामैं रहे लीन पुन सोई १०८॥
जाके भास निखल जग भासे। सहजानंदसु ज्योति प्रकासे॥
शांति निरंतर अक्रेरूपा। निरावयवस्तुअसंगअनूपा १०९

१ कालेमृगकी चर्म। २ स्रुवा-उपभृत् ध्रुवाइत्यादि पात्र। ३ दर्शपूर्णमास इष्टि तथा दृढपशु तथा मखयाग तथा सोमअग्निष्टोम तथा पद्धति इति कर्तव्यता क्रम। ४ श्लोक -यस्माद्विश्वमुदेति यत्र रमते, यस्मिन्पुनर्लीयते भासा यस्य जगद्विभाति सहजानन्दोज्ज्वलं यन्महः। शान्तं शाश्वतमक्रियं यमपुनर्भावाय भूतेश्वरं द्वैतध्वांतमपास्य यान्ति कृतिनः प्रस्तौमि तं पुरुषम् ॥ १॥ इसश्लोकका अर्थ मूलमें लिखाहै,।

द्वैत अंधेरो दूर मिटाइ । जामै मिल सुमोक्षी जाइ ॥
तत्त्वज्ञानते पावे मोक्ष । पुरुष पुरातन है निरदोष ११०
यहि पुरुष उर ब्रह्म पछानो । ब्रह्म न यांते भिन्न सुमानो ॥
बिनाज्ञान भासे पुन भेद । ज्ञान जनावे ब्रह्म अभेद १११
ऐसे बचन सुमेउरधार । यज्ञविद्या कीन उचार ॥
निखलक्रियाको करता जोई । कैसै पुरुष ब्रह्म पुनहोई ११२ ॥
क्रिया भवफासीपर हरे । ज्ञाननमुक्तिसु काहूं करे ॥
बेदकहें निजकर्म सुकरे । जौलौ जीवै नहिपरहरे ११३ ॥

दोहा ।

तातै तेग्रह राषणे, सरेन मेरो काज ॥
पर तदपि तूं ऐंवकर, ज्योंमम भाखों आज ॥ ११४ ॥
करताऔ पुन भोक्ता, पुरुष सुअहे बिसाल ॥
ऐसै निसबासर कहो, बसोसु किंचतकाल ॥ ११५ ॥
यामैंकहो सुकोन तव, लागत याजग दोष ॥
योंसुन राय विवेक पुन, बोल्यो धार सुरोष ॥ ११६ ॥

चौपाई ।

अहो मखनकोधूम सुकारा । यज्ञविद्याके नैन मझारा ॥
तांकर मलनदृष्टि वहुभई । यों कुतर्क यांतै निरमई ११७ ॥
यज्ञविद्या है निरबुद्धि । ईश्वर पुरुष अकरता शुद्ध ॥
चुंबक मणि ज्यों निहचल अहै । तासमीप लोहाकृतगहै ११८
त्यों ईश्वरकी संगतपाइ । माया लेवे निखल उपाइ ॥
अज्ञान जनत बन्धनहै जोई । कैसें कर्म निवारें सोई ॥ ११९

१ श्रुतिः-कुर्वन्नेवेह कर्माणि. जिजीविषेच्छतपसमाः अर्थयहः-इस कर्माधिकारभू-लोकमें अग्निहोत्रादि कर्मोंकूं कर्ताहूआहीं सौवर्षपर्यंत जीवनेकी इच्छा करे। २ ईश्वर औ पुरुषजीवात्मा।

तमज्यों तमको दूर न करे । त्यों नही कर्म सुबन्धनहरे ॥
तांतै यज्ञविद्या है जोई । सम्यक अर्थ नजानेसोई १२०

दोहा ।

लीन[1] अंधेरो भवन तम,करेसुजब प्रकास ॥
तब बिनज्ञान सुकर्मते,होवै बन्धननास ॥ १२१ ॥
बिन आत्मके ज्ञानते, मुक्तिपंथ नहि आन ॥
ऐसे बदनसरोजते,करे सुवेद[2] बखान ॥ १२२ ॥
कह्यो पुरुष उपनिषतको;बहुरों कहो विचार ॥
यज्ञविद्या तोहिको,कैसे कीन उचार ॥ १२३ ॥

उपनिषदुवाच ॥

चौपाई ।

यज्ञविद्या बहुर विचार । मोको याबिधिकीन उचार ॥
सखी सुतेरी संगति जोई । हमरे शिष्य बिगारे सोई १२४

दोहा ।

फल अनित्य सोजानकै,करेन सादर करम ॥
तेरी संगति पाइके,जाने निखल सुभरम ॥ १२५ ॥
तातैं वांछतदेशको, करो गमन ततकाल ॥
तब मैं ताको छोडिकर, चाली वहुर उताल॥ १२६ ॥
कर्मकांडकी सहचरी,पिखी मीमांसा जाइ ॥
बहु प्रकार भाषे कर्म,बहु अधिकारी पाइ ॥ १२७ ॥
तामै कह्यो समीप तब बसोंसु किंचतकाल ॥
तब उन कह्यो सुकर्ममुहि,भाषो सखी बिसाल॥ १२८॥

---

१ अन्धेरकेर ग्रस्त ग्रह । २ ऋतेज्ञानान्नमुक्तिः । ज्ञानादेव तु कैवल्यम् । नान्य पन्थाविद्यतेऽयनाय इत्यादिवेद ।

चौपाई।

तब मैं कह्यौ पुरुषको रूप। मैं भाखोंगी परम अनूप ॥
निज शिष्यनको बदन निहार। बहुर मीमांसा कीनउचार१२९
फलउपभोग योग्यहै जोई। पुरुष बखानेगी यह सोई ॥
करो कर्म इम ताहि उचारियो। तब तांशिष्यअनुमोदनधारियो
तब तांशिष्य एकथो जोई। मीमांसाकोविद अंगम सोई ॥
नाम कुमारलस्वामी वाको। कर विचारतिन भाख्योताको
करम निफल उपभोगता जोई। उपनिषत कहे नहआत्मसोई
किंतु कहे अकरता सोई। मुक्ता नाहिकदाचितहोई१३२
ऐसै आत्म रूप सुजोई। करम उपयोग्य करे नह सोई॥
बहुरो बोल्यो अपर बिचार। ज्योंहै त्यों ममकरो उचार१३२
पुरुषदोइ जगभीतर गाए। एक जीव इक ईश बताए ॥
मोह अंधेरे जीव दबायो। ईश्वरसकल सुसाक्षीगायो १३४
वांछे करमफल जीव सुजेते। ईश्वर देवे ताको तेते ॥
जीव करममें है अधिकारी। ईश अकारता बेदउचारी१३५॥
कल्पतबन्ध जीवमें अहै। ॥ नित्यमुक्ति परमेश्वर कहै ॥
सुन विवेक भूपति हरखाने। साधुसाधु मुखमाहि बखाने ॥
होवै भले सुदीरघ आयो। जाने या बिधि अर्थ अलायो॥
दोन सपॅरण बेदमै गाए॥ रहें इकठे सखाबताए॥१७३॥

---

१ यस्माद्विश्वमुदेति, इस पूर्वोक्त श्लोककर पुरुषका रूप कहा। २ साधुसाधु इसप्रकार स्वीकार किया। ३ द्वासुपर्णा सयुजा सखाया, समानं वृक्षं परिषस्वजाते तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति ॥ अर्थयहः—दो पक्षी जीवात्मा परमात्मा सो कैसे हैं साथ रहिनेवाले हैं तथापरस्पर अनुकूल हैं, तथा एक शरीररूप वृक्षकूं आलिङ्गन (स्वीकार,) करतेहैं तिन दोनोमें एक जो जीव हैसो स्वादु (पक) कर्मके फलकूं भोगताहै और अन्य जो परमात्मा है सो तिस कर्मफलकूंनहीभोक्ताहूआ प्रकाशता है नाम साक्षिरूप होयकर देखताहै ॥

समान वृक्षमै कीन सुबासा । एक खाइ फल एक उदासा ॥
बहुर पुरुष उपनिषत अलयो । कहो मात तहबहुरसुभयो १३८
सुन शिष्यनको एहु बिचार । मिमांसा मोप्रति कीन उचार॥
जह इच्छा तह कीजैगौन। लायक नाहि हमारे भौन १३९ ॥
मीमांसाते मैचली अगारी । तर्कविद्या और निहारी ॥
बहुते शिष्य सुसंग सुहाए । सेवत ताहिं निरंतर पाए १४०॥
धनकी इच्छा मनमै धार । बैठी भूपति सभामझार ॥
जल्प वितंडावादं विसाला । छलंनिग्रहबहुकरेकराला १४१
सांख्यविद्या बहुर निहारी । बैठी लांबी भुजा पसारी ॥
पुरुषनको बहु भेद बखाने । ततनंकी गणना उर ठाने १४२
कहे प्रकृतिसु जगत उपाये । महदादिक क्रमभाख सुनाए ॥
बहुर पतंजलविद्या देखी। पुरुष भेदं बहुकहै विसखी १४३॥
मैसभ इनके निकट सुगई । भाष्यो ईहावासहित अई ॥
तब तिन कह्यो सुकरम अलाई । मैपुन वही सुदयो बताई १४४
ईश्वर निखल सुजगत उपाए । पुरुष नाम पुन वही कहाए ॥
क्रोधयुक्त तामै इक भई । फुरेहोठ यों बात अलाई १४५

---

१ उभयपक्षस्थापनवती विजिगीषुकथा जल्पः) अर्थयहः-वादी प्रतिवादी इन दोनों पक्षोंकेस्थापनकरनेहारीऐसीजा परस्परजीतनकीइच्छावान् वादीप्रतिवादीदोनों-की प्रश्नउत्तररूप कथाहै ताका नाम जल्पहै । २ (स्वपक्षस्थापनहीना विजिगीषु-कथा वितंडा) अर्थ यहः-आपणे पक्षके स्थापनतैंरहित ऐसी जा जीतणेकी इच्छावाले पुरुषोंकी परस्परकथा है ताका नाम वितंडाहै । ३ तत्त्वबुभुत्सोः कथा वादः) अर्थ यहः--तत्त्ववस्तुके बोधनकीइच्छावाले पुरुषोंकीजापरस्परप्रश्न उत्तररूपकथाहैताका नाम वादहै । ४ अर्थान्तरेण प्रयुक्तस्य शब्दस्यार्थान्तरवर्णनं छलम्) अर्थ यहः--अन्य-अभिप्रायसें कथनकियेहुए शब्दके अन्यअर्थके वर्णनका नाम छलहै । ५ सत्त्वरजतम-गुणकी समअवस्थाकानाम प्रकृतिहै ता प्रकृतिसे महत्तत्व, महत्तत्वसे अहंकार, अहंकारसे पञ्चतन्मात्रा, पञ्चतन्मात्रासे पञ्चभूत,औ दश इंद्रिय येषोडश विकार तथा पुरुष जीवात्मा ये पचीस तत्त्वहैं । ६ नानापुरुष जीवात्मा मानेहैं ।

कौन बलाय कहांते आई। जाने ऐसी बात अलाई ॥
ऐसी बुद्धि तुमारी यातैं। धक्केखातफिरतहै तातैं॥ १४६ ॥
हापापिनि ईश्वर है जोई। किहविधि जगत् उपावै सोई ॥
एकें कहें प्रधान उपायो। एकें कहें प्रमाणु जायो॥ १४७
योंसुन रायविवेक सुजोई। लागो करण उचारण सोई ॥
तरकविद्यालो सभ जेती। दुष्टबुद्धि जानी सभ तेती १४८
कार्य अहै निखलजग जेतो। ईश्वर सगल उपायो तेतो ॥
एतीबाति न जानत जेई। हैं अति मूरख जगमै तेई१४९॥
प्रधान प्रमाणुलौ समजेते। कल्पत अहै सगळपुन तेते ॥
भूमि नीर अरु पावक पवना। कलपत सगल स्वप्नपुरभौना॥
गन्धर्वनगर पुन इन्द्र सुजाल। तांसम जान असत बिसाल॥
सीपरूप ज्यों रज्जु भुजंगा। ब्रह्म अज्ञानजन्योजगअंगा१५१

दोहा।

ब्रह्मज्ञानके उदेते,होवतेंहै पुन लीन ॥
ज्यों जागेते होतहै,स्वप्न सगल भ्रम खीन ॥ १५२ ॥

चौपाई।

विकारसंक तिहभीतर जोई। मूढमति उर कल्पी सोई ॥
शांति सदा वहिज्योति प्रकासी। नित्यप्रकास सदा अबिनासी॥
जगत गन्धर्व नगर सुउपाए। रंचकनाहि बिकार सुपाए ॥
नीलमेघ अरु धूल अपारा। नभमै करे नरंच विकारा॥ १५४

पुरुष उवाच ॥

चौपाई।

संदेहदवानल चीतमझारी। अमृत सिंच विवेक निवारी ॥
मेरो चीतसु अतिहरषयो। भलो बिचारबिवेकअलयो १५६

---

१ सांख्यी। २ नैयायिक।

दोहा।

पुरुष कह्यो उपनिषतको, बहुरों करो प्रकास॥
तरकविद्या पासतैं, कैसै भई उदास ॥ १५६ ॥

उपनिषदुवाच ॥

सर्वभईते क्रोध मन, ऐसै कौन बखान ॥
कहे जीवकी मुक्ति यह, सकलविश्वकरहान ॥१५७॥
तातैं नास्तकपंथको, एअब करे उचार ॥
केसनतैं याको गहो, करो भलीबिध मार॥ १५८ ॥

चौपाई।

पुरुष नारायण ईश्वर है जोई । तब मै चीत चितान्योसोई॥
कह्यो पुरुष ईश्वर है कोइ ।तब करुणाकर जानोसोइ १५९
उपनिषतकह्यो जो आपनजाने। ताको उत्तर कौन बखाने ॥
हरषसंयुक्त पुरुष पुन कहे। किहबिध मेपरमेश्वर अहै १६०
उपनिषतकह्यो परमेश्वर जोई । तोतेभिन्न नही पुन सोई ॥
तूं परमेश्वर नहीं न्यारो । ऐसै सदा चीत निरधारो १६१

दोहा।

माया अहै अनादि जो, ताको संगति पाइ ॥
जल सूर्य प्रतिबिंबज्यों, भेदवंत दिखलाइ ॥१६२ ॥
बहुरो पुरुष विवेक प्रति,कह्यो जोर कर दोइ ॥
भगवन अर्थ उपनिषतको, कह्योननिश्चेहोइ ॥१६२॥

चौपाई।

मै अवंच्छिन्न भिन्न पुन जोई । जरामरण धरमा पुन सोई ॥
नित्यअनंद चिदातम गाए । परंब्रह्म मम रूप बताए १६४॥

१ शरीरावच्छिन्न। २ उपनिषत।

कह्यो विवेक पदार्थज्ञान। अबलग तोहिभयो नहि भान ॥
पदार्थज्ञान उपावसु जोई। कह्यो पुरुष अब भाषोसोई १६५
कह्यो विवेक सुनो मनलाई। तोको देहु उपाइ बताई ॥
तत्त्वंपदके अर्थ भनीजे। एकवाच्यपुन लक्ष कहीजे १६६॥
वाच्य अभिन्न कदाचित नाही। लक्षमाहि विरोधसु नाही ॥
लक्ष चिदात्म है ये जोई। सो मैंयों उर चितवो सोई १६७
निखल उपाधिसु दूर निवारो। बहुरो तत अर्थ निरधारो ॥
तत्त्वमसि यों भाखे वेद। तातैं निखल मिटावे भेद॥ १६८॥
निखल द्वैतको दूर निवारो। चिदानंद उर आत्महि धारो ॥
बहुर पुरुष उपनिषत अलयो। तिहउपरंत कहो क्याभयो १६९

उपनिषदुवाच ॥

दोहा।

तबते सर्व सुदुष्टमति, मोहि फरनकेकाज ॥
दौरीचारों ओरते, मैंतब चाली भाज ॥ १७० ॥
सीतापति रघुवंशमणि, रामशील यशभौन ॥
जिह दंडकबनमै गए, तिह मैकीनो गौन ॥ १७१ ॥
तिह मंदर परबतविषे, मधुसूदन असथान ॥
ताहिनिकट जोदशामें, भई सुकरों बखान ॥ १७२ ॥

चौपाई।

किनहूंमै भुजदंड प्रहारे। तोडि मणि करकंकण तारे ॥
चूडामणि शीशते लीनो। खैंचे केश बहुत दुःख दीनो १७३

१ केईकपण्डितोंने, संधिविभक्तिरूप जो मेरेभुजदण्डहैं सो तोडडारेहैं तथा कंठकी मणिस्थानी अहंग्रह उपासनाहै सो फोड़डारीहै अर्थात् खैंचकर प्रतीक उपासनामें स्थापन करेहै औ करके कंकणस्थानापन्न निष्कामकर्म तथा विधिहै इनदोनोंको हरण-करे हैं और चूडामणीस्थानापन्न जो तत्त्वमस्यादिमहावाक्यहैं तिनको मतवादियोंने

दुरविदग्ध बहुता वनमाही । दासीकरन सुमेंडरचाही ॥
बिछुरी मम विवेक तेजान । बहुविधमेदुःखदयोअजान १७४
कह्यो पुरुष बहुरों भयो जोईं । मोको सगल सुनावो सोई ॥
कहि उपनिषत सुनो मनलाई । तव मेरे हरि भये सहाई १७६
तब मधुसूदनके असथान । निकसे पुरुष परम बलवान ॥
लेकरगदा सगलतेडानी । तबमोको वहि छाडि पलानी ॥

राजोवाच ॥

दोहा।

भागविहीन विमूढजे, करेते अपमान ॥
सहे न उरमै रंच वहु, जगसाक्षी भगवान ॥ १७७ ॥

पुरुष उवाच ॥

वैंदुष्या दशदिश गयी, दंडक विपिनमझार ॥
तबते कौन सुबिधभई, मोको करो उचार ॥ १७८ ॥

उपनिषदुवाच ॥

चौपाई ।

गीताके आश्रमकी ओरा । दौरी मै उर डऱ्यो सुमोरा ॥
नूंपर टूटिपरी पथमाही । वरी जाय आश्रमकेमाही १७९
तब गीता दुहिता मम प्यारी । पेखिकह्यो आई महतारी ॥
मातमातयों मुखो अलायो । मैंपद पंकजशीशु झुकायो १८०

शीशकी न्याई प्रधान-मुझ उपनिषदसे लीयाहै अर्थात् अंशअंशी, विकारविकारी, कार्यकारण, प्रकाश्यप्रकाशक, आधेयआधार, उपासकउपास्यादिक भाव ज्ञान कर अखंड अर्थका खंडन कियाहै तथा अवांतरवाक्यरूपी केश तिनवादियोंने मेरे खेंचेहैं भाव यहहैः-'सत्यं ज्ञानमनंतं ब्रह्म' इसअवांतरवाक्यमें सत्ताजातिमानीहै तथा ज्ञानादिक गुणमानतेहैं इति ।

१ चरणभूषण । २ मेरे चरणोंमें शिर निवाया ।

भलीभांति मुहि अंकमिलाइ । हेमपीठ मै ल्यो बैठाइ ॥
भयोवृत्तांतनिखलतिनजान्यो।बहुर सुमोको एहु बखान्यो १८१

दोहा ।

मात डरो नहि चीतमे, तेरो कर अपमान ॥
दुष्ट यथेष्टमें रमेंजे, ताहि हने भगवान ॥ १८२ ॥

चौपाई ।

श्रीपति यों मुख आप बखाने । दुष्टसुजे उपनिषत नमाने ॥
क्रूर नराधम हैं जग जेते । असुरयोनिमें डारों तेते ॥१८३॥
सुनकर पुरुष अनंद तब भयो । यों मुखमाहि सुबैन अलयो॥
सुन्यो अर्थमै पूर्व जोई । उपनिषत करावत निश्चे सोई॥

कविरुवाच ॥

दोहा ।

श्रवण मनन पूर्णभयो, निखल संदेह निवार ॥
निदध्यासनकी चाह उर, भई सुपुरुष उदार ॥१८५॥

चौपाई ।

या अवसर निदध्यासन आयो । बैठ सभामै एहु अलायो ॥
विष्णु भक्तिने मोहि पठायो । तातै मै ईहाचल आयो १८६
गूढ हमारो आयसु जोई । उपनिषत विवेकप्रतिभाखोसोई
दोनोको यह बात प्रकाश । पुरुषमाहि तूं करीनिवास १८७॥

---

१ गीतामे कहाहैः-तानहं द्विषतः क्रूरान्संसारेषु नराधमान् । क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेवयोनिषु । अर्थयहः-हेअर्जुन-द्वेषकरणेहारे तथा क्रूर तथा नरोंविषेअधम तथा निरंतर अशुभकर्मोंकूं करणेहारे ऐसे तिन आसुरप्राकृतिपुरुषोंकूं मैंपरमेश्वर अत्यन्त क्रूर व्याघ्रसर्पादिक योनियोंविषे ही गेरताहूं । २ श्रवणंनामाद्वैते ब्रह्मण्युपनिषदांतात्पर्यावधारणम् । मननं नाम युक्तिभिरनुचिन्तनम् । निदिध्यासनं नाम विजातीयप्रत्ययतिरस्कारेण सजातीयपत्ययप्रवाहीकरणम् ।

बहुर बिलोकसु एहु बखानी। यह बैठी उपनिषत सुरानी॥
पुरुष विवेकसंग सुहाए। चलौनजीक सुदेहुसुनाए१८८
ऐसवखाननिकट वहुगयो। उपनिषतसमीप सुवाकअलयो
देवी विष्णुभक्ति है जोई। ताहि बखान्यो सुनियसोई१८९
संकल्प[1]योनि देवता सारी। यह नीकेमै आप निहारी॥
उपनिषतसंगभा अब तू भई। कन्या तेउरमै निरमई॥१९०॥
और प्रबोधचन्द्र सुत जान। मेरो कह्यो सुसत्य पछान॥
क्रूर[3]सुभावजु कन्या अहै। उपजी निखलसंबन्धी दहै१९१
ब्रह्म[4]विद्या कन्या जोई। मनमै करो संचारण सोई॥
संकर्षण[5]विद्याको उरधार। मनके उदर कन्या डार १९२
प्रबोध[6]चन्द्र पूत पुन जोई। पुरुषसमर्पणकीज सोई॥
विवेकसहित तूं मेरे पास। उपनिषत करो अबसहजनिवास

दोहा।

विष्णुभक्ति जोभाष्यो, सोई करौं न और॥
योंकहि संगविवेकके, गई इकंत सुठौर॥ १९४॥
निदध्यासन तब पुरुषके, कीनो आन प्रवेश॥
धन्यो पुरुष उर ध्यान तब, जाकर हरे कलेश १९५॥
नेपथ्यमाहि प्रवेशकर, दोनो नयन मिलाइ॥
अद्भुतरूपध्याय उर, बोल्यो सहज सुभाइ॥ १९६॥

---

१ संकल्पमात्रतेउत्पतिहै जिनोकी न मैथुनसे तथा च श्रुतिः-'ब्रह्म वा इदमग्र आसीत्' इहासे आरंभकरके'इद्रंसर्वमभवत्' इहांपर्यंतसंकल्पप्रभवत्व दिखायाहै बृहदारण्यकमें इसप्रकारमें योगसामार्थ्यजन्यध्यानसे जान्या। २ विवेकके संकल्पसें। ३ जगत्का नाशक होनेसे क्रूरसुभाववाली है। ४ आत्मसाक्षात्कार रूपा। ५ योगकर आकर्षण-रूप। ६ निरतिशय ब्रह्मप्रकाशक।

मन वक्षस्थल फोरकै, कन्या भई प्रकास ॥
सहत समग्री मोहको, कीनो एकइग्रास ॥ १९७॥
तडता समदमकी महां, दिशको तिमर मिटाइ ॥
अंतरध्यानक्षणमें भई,ऐसोरूप दिखाइ ॥ १९८ ॥
यह प्रबोधशशि उपज्यो, ताको भ्रात बिसाल ॥
सभा प्रवेश प्रबोध तब, कीनो वाहूकाल ॥ १९९ ॥
कहांगयो किनभयो भव, लीन भयो ततकाल ॥
जाउपजेते भयो यों, सोमैं बोध बिसाल ॥ २०० ॥
परकरमदेपिखभाष्यो, यहहै पुरुष उदार ॥
चलों समीप सु याहिके, करों सुपाद जुहार ॥ २०१॥
जाइसमीप सुपुरुषके, भगवनमुखो उचार ॥
हौं प्रबोधउपनिषत सुत, बन्दो पाद तिहार॥२०२॥
पुरुष विलोक आनंदउर, हेसुत परम अनूप ॥
मिलोसु मेरे अंकमें, कीजे शीतल रूप ॥२०३॥
मिल्यो प्रबोध सुपुरुषको, शीतलचन्द उदार॥
पुरुष अनंद सुहोय उर, लागो करनउचार॥ २०४ ॥
अहो तिमर पट फाटियो, भयो प्रभांत[1] अनूप ॥
निखलकलेश बिनाशया, पायो परमसरूप॥२०५॥
मोह अंधेरे[2] बिनाशकर, नींद विकल्प[3] सुमार ॥
बोधशशि यह ऊपजो, जाकि प्रभा अपार ॥ २०६ ॥

सवैया।

आज परातम पूरन जो, वहि पूरन रूप सुदेत दिखाई ॥
बन्धन जो सभ दूरभये, रविसी उर अंतर ऊजलताई ॥

१ -संसाररात्र्यपगमाद्बोधः प्रातः क्षणो मतः अर्थयहः-संसाररूपी रात्रीके जानेसे बोधही प्रातःक्षण मान्याहै। २ अज्ञान। ३ भ्रमही निद्रा है।

आज कृतार्थभूरभये, सुमिटी निजआतमकी कलखाई ॥
बोधकरे सभकाजसंपूरन, पूत सुपूतभये सुखदाई ॥ २०७ ॥

दोहा।

श्रद्धा[1] मति विवेक पुन, शांति यमादिक धार ॥
सर्वात्मप्रभबिश्व जो, सोहम भए उदार॥ २०८ ॥
हरिकी भक्ति प्रसादते, भए कृतार्थ रूप ॥
बन्धन सगल मिटाइया, पाए ज्ञान अनूप ॥ २०९ ॥
बैठ इकंत सुमोन गहि, मनकर कीनो ध्यान ॥
शांतिभयो भय शोकहन, भयो मोह सभहान॥ २१० ॥
यांप्रबोधहित भवनतजि, भवें भवारण्यमाहिं ॥
ताकोपाइ सुमुनि भयो, मैं निजभवन सुमाहिं॥ २११ ॥
विष्णुभक्ति आई तबै, उरमै हरष अपार ॥
आइ समीप सुपुरुषके, कीनो एहु उचार ॥ २१२॥
बहुत कालकर फले जग, मोहि मनोरथ आज ॥
शांतिअराति सुतवपिखों, भये सगल मम काज॥ २१३
पुरुष कह्यो तव कृपाते, कोफल दुहकर आहि ॥
ऐसै मुखो अलाइकर, पऱ्यो सुचरननमाहि॥ २१४॥

दोहा।

विष्णुभक्ति सुउठाय तिह, कीनो एहु उचार ॥
पूतकहो प्रयकाजकछु, पुन मैं करों तिहार ॥ २१५ ॥
पुरुष कह्यो अब याहिते, परे न प्यारे काज ॥
जीत अराति विवेकनृप, भयो कृतार्थ आज ॥ २१६ ॥

१ श्रद्धा गुरुवेदवाक्ययोर्बिश्वासः;-विवेकमतिर्नित्यानित्यवस्तुविवेकबिषया-शान्तिरौदासीन्यम्-यमश्चित्तवृत्तिनिरोधः।

रुज बिहीन आनंदपद, थाप्यो ताहि सुमोहि ॥
विष्णुभक्ति पद बन्दना, करेकाज सभ तोहि ॥२१७॥

सवैया।

यद्यपि पूर्ण आहि मनोरथ तदपि मात सुएहु बरे ॥
रूचिके अनुसार करे बरषा, घनभूपति भूमिसुपालकरे ॥
तेंकरुणाकर लोक महातम, आतमको तम दूरहरें ॥
भवसागर धार बिषे ममता, गहि बोधजहाज सुपार परें॥२१८॥

दोहा।

प्रत्यक्त तत्त्व निज आतमा, कीरति वरमाभूप ॥
मनोवृत्ति सभनाटकै, कोविद लखैं अनूप ॥ २१९ ॥

सवैया।

यहनाटकहे रसुभूपतिके उर माहि सुभाऽसुभ ज्ञानभयो ॥
तजिया जगमाहि कुपंथ बडोशुभपंथ महीपति चीतलयो ॥
बिसमाय रह्यो उरभीतर सो सुशिलूषनको बहु दानदयो ॥
बहुनाटकहैं भवमंडलमें नरनाहनको यह नाटनयो ॥ २२० ॥

दोहा।

कहनेको यह नाटहै, दरपन अहै अचार ॥
पावै पावन मोक्षको, कीने याहि विचार ॥ २२१ ॥
गौरी जननी लोकमें, राया जनक महान ॥
गुल१बसिंह सुत ताहिके, नाटक कीन बखान ॥ २२२ ॥
कीरति पूरन लोकमै, पूरण परमानंद ॥
पूरन पद दातारप्रभु, बन्दौ श्रीरघुनंद ॥ २२३ ॥

---

१ अन्तः करणमें जो अज्ञान ।

जिह अज्ञान निवारयो, दीनो मोक्ष अपार ॥
मानसिंह गुरुचरनको, बन्दौ वारंवार ॥ २२४ ॥

शंकर छन्द।

रस वेद औ वसु चन्द संवत लोक भीतर जान ॥
नभमास भृगु पुन वासरे दशमी वदी पहिचान ॥
गुरु मानसिंह पदारविंद अलंबना उरठान ॥
कुरुक्षेत्र प्राचीकूलतट यह कीन ग्रन्थ बखान॥ २२५ ॥

श्लोक।

शुद्धाशुद्धश्च संशोध्य गुढार्थाश्च प्रकाशिताः॥
अवशिष्टामशुद्धिश्च शोधयन्तु मनीषिणः ॥ १ ॥
गुरोः कृपां समासाद्य रचयित्वा सुटिप्पणीम् ॥
मया गुरुप्रसादेन गुरोः पादे समर्पिता ॥ २ ॥

इति श्रीमन्मानसिंह शिक्षितगुलाबसिंहविरचिते प्रबोधचन्द्रोदयनाटके षष्ठोऽङ्कः समाप्तः ॥ ६ ॥

इन्दुस्कन्दाङ्कचन्द्रेऽब्दे द्वादश्यां श्रावण तिथौ ॥
वनखण्डिप्रसादाख्यात्सम्पूर्णा टिप्पणी शुभा ॥ १ ॥

---

१ अर्थ यहः-इसग्रन्थमें शुद्धाऽशुद्धका शोधन करके गूढअर्थोंका प्रकाश कियाहै तथा अवशिष्ट (बाकी) रहीहुई अशुद्धिको बुद्धिमान् पुरुष स्वयं शोधलेंवे ॥ १ ॥ गुरुमहराजजीकी कृपाको प्राप्त होयकर मैं गुरुप्रसादने सुन्दरटिप्पणिका निर्माणकरके श्रीगुरुजीके चरणोमें समर्पित कियीहै । २ ।

इतिश्री १०८ मत्परमानन्दोदासीन शिष्यगुरुप्रसादविरचिता प्रबोधचन्द्रोदयनाटकेटिप्पणिका समाप्ता ॥ १ ॥ इति शम्।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-
खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम् प्रेस-मुंबई.